हि. ८६१
१६०५
CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रत्नदीप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राप्ति-संख्या.....................

य-कार्ड

० जैन (शोध) संस्थान

थागार

वाराणसी-५

....

....

लेनेवालेका हस्ताक्षर	लौटानेकी तिथि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर युवक राज ... स्वर

ई दिल...

'सुधेश' जैन नागौ...

आठ वर्ष हो चुके तुम्हें हैं यद्यपि... ...ध्यारे।
फिर भी आठों पहर याद हो आते सुगुण तुम्हारे॥

(१)

यद्यपि सत्य यह, यहाँ किसी को मिल... नही अमरता।
तो भी तुम से वीर युवक का असमय ... ण अखरता।
उठती रहती याद तुम्हारी हर प... के उर में।
और तुम्हारी छवि प्रतिबिम्बित होती चित्त मुकुर में॥

फिर वे कैसे भूलें तुम थे जिनके दृग के तारे।
आठ वर्ष हो चुके तुम्हें हैं यद्यपि स्वर्ग सिधारे।
फिर भी आठों पहर याद हो आते सुगुण तुम्हारे॥

(२)

आज हमारे बीच नहीं तुम केवल शेष कहानी।
जिसे श्रवण कर स्वतः उमड़ने लगता दृग में पानी।
तुमने शैशव से ही थी निज आत्मिक शक्ति जगायी।
की थी होकर युवा वीरता-युवती संग सगाई॥

लगते थे वीरत्व भरे ही खेल तुम्हें अति प्यारे।
आठ वर्ष हो चुके तुम्हें हैं यद्यपि स्वर्ग सिधारे।
फिर भी आठों पहर याद हो आते सुगुण तुम्हारे॥

(३)

तुमने मातृभूमि की सेवा में निज शक्ति लगायी।
उसके चरणों में निज प्राणों की भी भेंट चढ़ायी।
वीर मरण कर किया प्रमाणित निज को वीर-प्रतापी।
कर नवीन आदर्श उपस्थित राह स्वर्ग की नापी॥

युवकों को सन्मार्ग प्रदर्शक हैं पद चिन्ह तुम्हारे।
आठ वर्ष हो चुके तुम्हें हैं यद्यपि स्वर्ग सिधारे।
फिर भी आठों पहर याद हो आते सुगुण तुम्हारे॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दो शब्द *

यों तो न जाने ने प्राणी नित्य जन्म लेकर, हंसते रोते हुए जीवन के दिन पूरे करके चि में सो जाते हैं पर जो देश सेवा का व्रत लेकर इस बलिवेदी पर ाए तक उत्सर्ग करने में सौभाग्य मानते हैं, इतिहास ऐसे लोगों को ही वीर की उपाधि देता है। श्री राजराजेश्वर जैन भी उन्हीं वीरों में से एक थे जिन्होंने घुटनों के बल सरकते हुए देश सेवा का पाठ पढ़ा।

वे अपने माता-पिता के ज्येष्ट पुत्र थे। उनका जन्म ४ फरवरी सन् १९३४ को हुआ। उनके पिता श्री सुखमाल चन्द्र जैन, दिल्ली में आर्म्ड फोर्सेस हेड क्वाटर्स में, आफिसर सुपरवाइजर के पद पर कार्य करते हुए समाज के कार्यों में भी महत्वपूर्ण भाग लेते रहे हैं। राजराजेश्वर की प्रारम्भिक शिक्षा डा० मुंजे द्वारा स्थापित श्री भोंसले मिलट्री स्कूल, नासिक में हुई। भारतीय वायुसेना में प्रवेश के वाद इनका प्रशिक्षण क्रमशः नेशनल डिफेंस एकेडमी (ज्वाइंट सर्विसेज विंग) देहरादून और एयरफोर्स कालेज, जोधपुर में हुआ।

१६.अप्रैल १९५५, को वे भारतीय वायुसेना में पाइलट अधिकारी के पद पर प्रतिष्ठित हो गये। इस पद पर रह कर उन्होंने काश्मीर स्थित वायुसेना में अपने देश के उन सैनिकों की महत्वपूर्ण सेवा की जो राष्ट्र की सुरक्षा के लिए गगनचुम्बी गिलगित के हिमशिखरों पर बैठे थे। वह डेढ़ वर्ष ही इस पद पर सेवा कर सके थे कि क्रूर काल का न्यौता उन्हें आ पहुंचा और २ अक्तूबर १९५६ को भुज (सौराष्ट्र) के हवाई अड्डे से छादवेट को राशन ले जाते हुये, वायुयान दुर्घटना में उनका शरीरान्त हो गया। अभी पुष्प खिल ही रहा था, खिलता तो न जाने कौन-कौन से प्रदेश, कौन-कौनसी दिशायें उससे सुरभित होती। चि०राजेश्वर की मृत्यु से देश समाज और जाति की अपार क्षति हुई।

स्व० राजराजेश्वर के जीवन से भारतीय युवकों को प्रेरणा मिले और उनमें राष्ट्र के लिये मर मिटने का संकल्प पैदा हो, इसीलिए 'रत्नदीप' का जन्म हुआ। प्रस्तुत अंक इसकी तृतीय ज्योति है। जिस उत्साह, लगन और धर्मवृत्ति की भावना से श्री सुखमालचन्द्र ने इस कार्य को आगे बढ़ाया है इसके लिए नोवदित पीढ़ी सदैव उनकी आभारी रहेगी।

डी २/९ माडल टाउन, दिल्ली-९
२७ जून, १९६५

मुनीन्द्र कुमार जैन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राजराजेश्वर भवन

स्थान — नम्बर एफ ३, ग्रीन पार्क (मेन) नई दिल्ली-१६

क्षेत्रफल—४०' × ८०' = ३२०० वर्ग फुट

आर्कीटेक्ट — श्री पी० डी० अग्रवाल

लेबर कण्ट्रैक्टर — श्री सेवा सिंह

लकड़ी का काम — श्री केहर सिंह

विजली का काम — श्री अजायब सिंह

रंग रोगन का काम — श्री सुखदेव

फ़र्श का काम — सर्वश्री रामनिवास, मोतीराम, प्रभुदयाल

सेनीटरी का काम — श्री जदुमणि प्रधान

शिलान्यास — १४ नवम्बर १९६४ को पंडित मिट्ठनलाल जी द्वारा संपन्न।

गृहप्रवेश पूजन — १३ मई १९६५ को पंडित रतनलालजी द्वारा संपन्न।

श्री सुवर्णभद्रकूट चैत्यालय — १५ मई १९६५ को पंडित सुमेरचन्द शास्त्री द्वारा विधि-विधान सहित स्थापित।

१९ मई १९६५ को श्री महावीर जी में हुये पंचकल्याणक महोत्सव में प्रतिष्ठित श्री पार्श्वनाथ तथा श्री महावीर भगवान के चरण-चिन्ह स्थापित।

दिल्ली परिवहन, बस रूट नं०—

ग्रीन पार्क वस स्टाप—प्रतिदिन १७, २८, (दिल्ली जंकशन से चलती है) ३०,३६,४९। छुट्टियों के दिन—१२, २४, बी, २७बी, ३७

युसुफ सराय बस स्टाप (जो ग्रीन पार्क से पहला स्टाप है और ग्रीन पार्क से अत्यन्त ही निकट है)। प्रतिदिन—१७, २७ २७ ए, २८, ३०, ३६, ४९, छुट्टी के दिन—१२, २४ बी, २७ बी, ३७

राज राजेश्वर भवन में स्थित सामाजिक संस्थाओं के कार्यालय—

श्री सत्साहित्य संवर्धन केन्द्र—विक्रय विभाग

श्री जैन छात्रवृत्ति कोष

श्री प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान (संयोजक श्री विमल भाई, पहाड़ी धीरज, दिल्ली)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय-सूची

वीर युवक राजराजेश्वर	श्री 'सुधेश' जैन नागौद	आमुख
दो शब्द	श्री मुनीन्द्र कुमार जैन ...	,,
राजराजेश्वर भवन	विवरण	,,
निवेदन	सुखमालचन्द्र ...	२
चरण बन्दना		
प्रभु पार्श्व बन्दना	कल्याण मन्दिर स्तोत्र का पं० कमल कुमार शास्त्री कृत हिन्दी पद्यानुवाद	६
Raj Rajeshwar	....	१३
Letters	Raj Rajeshwar ...	१६-२६
रात्रि में आकाश विहार	राजराजेश्वर ...	२४
यह संसार—जैसा मैंने देखा	सुखमालचन्द्र	३१
वीरों की समाज	,, ,, ...	३६
विवाह प्रथा—आज के युग में	,, ,, ...	३८
वीर-प्रभु बन्दना	....	४३
गुरु बन्दना	....	४३
राजराजेश्वर का नियुक्तिपत्र	....	४४
सविनय कोटि प्रणाम	श्री 'सुधेश' जैन, नागौद....	४६
भक्ति भावना	....	४७
ग्रीन पार्क के निकटवर्ती दर्शनीय तथा ऐतिहासिक स्थान	श्री मुनीन्द्र कुमार जैन	५०
Raj Rajeshwar Bhawan Location Map	Shri Dwarka Prasad Mathur, Architect	५२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

卐

SOUVENIR

To Commemorate the Opening Ceremony

OF

Shri

Suvarnabhadrakut Chaityalaya

AND

RAJ RAJESHWAR BHAWAN

AT

F-3, GREEN PARK, NEW DELHI

Chief Editor

M. K. JAIN

M. A., B. Sc. (Agri.), J. D., SAHITYARATNA, SAHITYALANKAR

PRINTED AND PUBLISHED IN INDIA BY S.C. JAIN, FROM

THE DIPAK ART PRESS, D.2/9, MODEL TOWN, DELHI-9

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

* निवेदन *

राजराजेश्वर भवन तथा उसके शिखर पर प्रतिष्ठित श्री सुवर्णभद्रकूट चैत्यालय के उद्घाटन के अवसर पर रत्नदीप की यह तीसरी ज्योति प्रज्वलित हो रही है। राजराजेश्वर का परिचय और उसके चित्र इस ज्योति में प्रतिभासित हो रहे हैं।

सुवर्णभद्रकूट परम पूज्य गिरिराज श्री सम्मेदशिखर जी का वह उच्चतम टोंक है जहां से तेइसवें तीर्थंकर महाप्रभु पार्श्वनाथ भगवान ने निर्वाण प्राप्त किया है। श्री सुवर्णभद्रकूट चैत्यालय में भी श्री पार्श्वप्रभु जी के चरण विराजमान हैं।

ग्रीन पार्क में एक अत्यन्त भव्य तथा विशाल जैन मन्दिर की स्थापना होने पर भी उसके अत्यन्त ही निकट राजराजेश्वर भवन में चैत्यालय की स्थापना क्यों हुई है ? प्रथम तो यह भाव आया कि हम संसारी जीव केवल अपने निवास के लिए ही भवन निर्माण करें, इसकी अपेक्षा यह अधिक युक्तियुक्त और कल्याणप्रद है कि हम जो भी भवन-निर्माण करें उसमें सर्वोच्च स्थान पर श्री जिन-चरण विराजमान हों जिनकी छत्र-छाया में हम भी फिर आश्रय लेलें। दूसरे स्वर्गीय परम वीर ज्येष्ठ पुत्र राजराजेश्वर की प्रेरणादायक स्मृति को जागृत रखने वाले इस भवन के उसके भाग में केवल श्री जिन-चरणों की प्रतिष्ठा ही उसके अभाव-जनित संक्लेश परिणामों को दूर करने का साधन हो सकती है। तीसरे हमारी धारणा है कि प्रत्येक निवास-स्थान में 'ड्राइंग-रूम', 'बाथ रूम' आदि के साथ साथ यथायोग्य स्थान पर धर्म-ध्यान तथा स्वाध्याय के लिये भी एक 'रूम' होना चाहिए—हमने उस रूम को चैत्यालय का रूप देने की इस आशा से भावना की है कि यह कार्य परिवार में और पड़ोस में धर्म-भावनाओं और धर्म-क्रियाओं की उत्पत्ति तथा वृद्धि का साधन बन जाय।

इस अत्यन्त शुभ और पवित्र अवसर पर भी हम 'हर्ष' शब्द का प्रयोग करने की क्षमता नहीं कर सकते हैं। कारण स्पष्ट है। श्री जिन-चरणों की भी यही आज्ञा है कि जहां विवाद करने का निषेध किया है वहां साथ ही साथ हर्ष का भी निषेध है।

इस दुःखमा काल में श्री सुवर्णभद्रकूट चैत्यालय रेगिस्तान में नख़लिस्तान के समान शरणागत जीवों को सुख-संपत्ति तथा सम्यक् रत्नत्रय का दान करता रहे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होवै सारी प्रजा को सुख बलयुत हों धर्मधारी नरेश।
होवै वर्षा समय पर तिल भर न रहे व्याधियों का अंदेश॥
होवै चोरी न जारी सुसमय वर्ते, हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारें जिनवर वृष को जो सदा सौख्यकारी॥

अपनी सन्तान से : किसी औषधि का पूरा लाभ उठाने के लिये आवश्यक है कि रोगी संयम से रहे और समुचित आहार-विहार में ही प्रवृत्ति करे। कल्याण के आगार श्री सुवर्णभद्रकूट चैत्यालय से पूर्ण लाभ उठाने के लिये आवश्यक है कि भवन में हर प्रकार की पवित्रता रखी जाय। पांच पाप (हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह) तथा सात व्यसन (जुवा, मद्य, मांस, चोरी, वेश्या, पर-स्त्री, शिकार) में तो प्रवृत्ति करने का नाम हो ही नहीं, ब्रह्मचर्य अणुव्रत होते हुवे भी भवन में रहते समय पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहने की कृपा करें। मुझे विश्वास है कि यदि मेरी सन्तान इस नियम का पालन करेगी तो उसकी सुख समृद्धि में कोई अन्तर नहीं आयगा और वह—

ओजस्तेजो विद्या वीर्य यशो वृद्धि विजय विभव सनाथाः।
महाकुला महार्थाः मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः॥

होकर, समाज और राष्ट्र का न्याय-नीति से सफल नेतृत्व करते हुवे कालान्तर में कर्मजाल से अवश्य मुक्ति प्राप्त करेगी। यही जीवन का लक्ष्य है—इस लोक और परलोक में सुख की प्राप्ति।

कहने को बहुत सी बातें हैं परन्तु सब शास्त्रों में लिखी हैं। संक्षेप में उपर्युक्त पांच पापों तथा सात व्यसनों से विरति ही इस उत्तम कुल का लक्षण होना चाहिए। दुराचार भ्रष्टाचार आदि अनैतिक और आत्मघाती आचरण से मेरी सन्तान दूर रहे। जो वीरता, साहस, और देश पर बलिदान की परम्परा वीर राजराजेश्वर ने स्थापित की है वह इस कुल में पीढ़ी दर पीढ़ी कायम रहे। मेरी सन्तान प्रतिदिन यह भावना करती रहे और इसी के अनुसार अपने हित में प्रवृत्ति करती रहे :—

शास्त्रों का हो पठन सुखदा लाभ सत्संगति का,
सद्वृत्तों का सुजस कहके दोष ढाँकूं सभी का।
बोलूं प्यारे वचन हित के आपका रूप ध्याऊँ,
तौलों सेऊं चरण जिनके, मोक्ष जौलों न पाऊँ॥

आभार : पूज्य ज्येष्ठ भ्राता श्री गुरुचरणदास जी ने ही इस भवन का निर्माण अपनी देख-रेख में, अपने सारे इंजीनियरिंग के अनुभव का लाभ पहुंचा कर कराया है। उनके उपकार का वर्णन भी शब्दों द्वारा अशक्य है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रिय अनुज श्री जंगबहादुरसिंह जी ने सब प्रबन्ध का भार वहन करके इस दुस्तर कार्य को पूरा कराया। यह भवन उनके ही उत्साह और प्रेरणा से प्रारम्भ किया जा सका था। प्रिय पुत्र अरिञ्जय ने निर्माण संबन्धी सब कार्य परिश्रम के साथ किया। परिवार उसका धन्यवाद करता है।

निर्माण-कार्य में सहयोग देने वाले, जिनके शुभ नाम तथा शुभ कार्य अन्यत्र प्रकाशित हैं सब व्यक्तियों, सरकारी विभागों, म्युनिस्पिल कारपोरेशन, कम्पनियों, फर्मों, आदि का इस अवसर पर पूर्ण आभार मानता हूँ तथा भावना करता हूँ कि उनकी समृद्धि तथा संपन्नता सदा बढ़ती रहे।

मंहगाई : यदि यह भवन सन् १९५८ में बनता तो आज से दो तिहाई ही व्यय होता। परन्तु प्रत्येक कार्य और प्रत्येक भाव अपने अपने अनुकूल काल में ही संपन्न होते हैं। सन् १९४७ में परिवार में चक्रेश जैन (पुत्री) के जन्म के साथ साथ देश में स्वतंत्रता और मंहगाई (दो जुड़वाँ) पुत्रियों का भी जन्म हुआ।

मानसिक स्वास्थ्य की रक्षार्थ हमारी यह कल्पना है कि जितना अधिक व्यय हुआ वह इस पाँचवीं पुत्री मंहगाई के विवाह का अनिवार्य दहेज दिया गया। जिन लेखकों और कवि बन्धुओं की रचनाएं इस ज्योति में संकलित हैं उनका भी धन्यवाद है, विशेषकर श्री सुधेश जैन, नागोद और 'पार्श्वप्रभु वंदना' के रचयिता पं० कमलकुमार जैन शास्त्री 'कुमुद' का।

क्षमा-प्रार्थना : इस मेरे लिए महान कार्य में अज्ञानता तथा प्रमाद के वश जो मुझसे भूलें अपराध अवश्य हुये हैं उनके लिए मैं संबन्धित व्यक्तियों से क्षमा-याचना करता हूँ। देवों तथा अतिथियों के यथा-योग्य आह्वान तथा अभ्यर्थना में जो त्रुटियां हैं उनके लिए क्षमा-याचना करता हूँ। देव-शास्त्र-गुरु की प्रतिष्ठा-पना पूजा-महोत्सव में शास्त्रोक्त विधि से जो अत्यन्त न्यूनता है उसके लिए भी क्षमा-याचना करता हूं।

क्षमा-प्रार्थी

[signature]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रत्न दीप

तृतीय ज्योति

प्रच्छन्नः खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात्
पन्थाः मुक्तेः स्थपुटितपदः क्लेशगर्त्तैरगाधैः ।
तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्वावभासी
यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारती रत्नदीपः ।।

हे देव ! इस संसार में मुक्ति का मार्ग सब तरफ से पापरूपी घने अन्धकार से छिपा हुआ है और अत्यन्त गहरे क्लेशरूपी गड्ढों से व्याप्त है। इस कारण उसमें बारबार ठोकरें लगती हैं। ऐसे दुर्गम मार्ग में आसानी से कौन चल सकता ! यदि आगे आगे तत्वों का स्वरूप प्रगट करने वाला आपकी वाणीरूपी रत्नदीप न होता ?

❊ चरण बन्दना ❊

अतिशय घनी तमराशि को दीपक हटाते हैं यथा।
दोनों कमल पद आपके अज्ञान तम हरते तथा ।।
प्रतिविम्ब सम स्थिर रूप वे मेरे हृदय में लीन हों।
मुनि नाथ कीलित तुल्य वे उर पर सदा आसीन हों ।।

❊ ❊ ❊

तव पद मेरे हिय मैं, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तब लों लीन रहे प्रभु ! जबलों पाया न मुक्तिपद मैंने ।।

❊ ❊ ❊

सुरनतमुकुट रतन छविकरें, अन्तर पाप-तिमिर सब हरें।
जिन पद बंदूं मन बच काय, भव जल पतित उद्धरण सहाय ।।

❊ ❊ ❊

निर्भयकरन परम परधान। भव-समुद्र जलतारन यान ।।
शिवमन्दिर अघहरन अनिन्द। बन्दहुं पास चरन-अरविन्द ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

* प्रभु पार्श्व बन्दना *

(१)

अनुपम करुणा की सु-मूर्ति शुभ, शिव-मन्दिर अघनाशक मूल ।
भयाकुलित व्याकुल मानव के, अभयप्रदाता अति-अनुकूल ।।
विन कारन भवि जीवन तारन, भव-समुद्र में यान-समान ।
ऐसे पाद-पद्म प्रभु पारस, के अर्चूं मैं नित अम्लान ।।

(२)

जिसकी अनुपम गुण-गरिमा का, अम्बुराशि सा है विस्तार ।
यश-सौरभ सु-ज्ञान आदि का, सुरगुरु भी नहिं पाता पार ।।
हठी कमठ शठ के मद-मर्दन, को जो धूमकेतु-सा शूर ।
अति आश्चर्य कि स्तुति करता, उसी तीर्थंपति की भरपूर ।।

(३)

अगम अथाह सुखद शुभ सुन्दर, सत्स्वरुप तेरा अखिलेश ! ।
क्यों करि कह सकता है मुझसा, मन्दबुद्धि मूरख करुणेश ! ।।
सूर्योदय होने पर जिसको, दिखता निज का गात नहीं ।
दिवाकीर्ति क्या कथन करेगा, मार्तण्ड का नाथ ! कहीं ? ।।

(४)

यद्यपि अनुभव करता है नर, मोहनीय विधि के क्षय से ।
तौ भी गिन न सकै गुण तुव सब, मोहेतर कर्मोदय से ।।
प्रलयकाल में जब जलनिधिका, बह जाता है सब पानी ।
रत्नराशि दिखने पर भी क्या, गिन सकता कोई ज्ञानी ?।।

(५)

तुम अतिसुन्दर शुद्ध अपरिमित, गुण रत्नों की खानि स्वरूप ।।
बचननि करि कहिने को उमगा, अल्पबुद्धि मैं तेरा रूप ।।
यथा मन्दमति लघु शिशु अपने, दोऊ कर को कहै पसार ।।
जल-निधि को देखहु रे मानव, है इसका इतना आकार ।।

(६)

हे प्रभु ! तेरे अनुपम सब गुण, मुनिजन कहने में असमर्थ ।
मुझसा मूरख औ अबोध क्या, कहने को हो सकै समर्थ ।।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुनरपि भक्तिभाव से प्रेरित, प्रभु स्तुति को बिना विचार।
करता हूँ, पंछी ज्यों बोलत, निश्चित बोली के अनुसार॥

(७)

है अचिन्त्य महिमा स्तुति की, वह तो रहै आपकी दूर।
जब कि बचाता भव-दुःखों से, मात्र आपका 'नाम' जरूर॥
ग्रीष्म कु-ऋतु के तीव्र ताप से, पीड़ित पन्थी हुये अधीर।
पद्म-सरोवर दूर रहे पर, तोषित करता सरस-समीर॥

(८)

मन मन्दिर में वास करहिं जब, अश्वसेन वामा नन्दन।
ढीले पड़ जाते कर्मों के, क्षण भर में दृढ़तर बन्धन॥
चन्दन के विटपों पर लिपटे, हों काले विकराल भुजंग।
वन-मयूर के आते ही ज्यों, होते उनके शिथिलित अंग॥

(९)

बहु विपदाएँ प्रबल वेग से, करें सामना यदि भरपूर।
प्रभु-दर्शन से निमिषमात्र में, हो जातीं वे चकनाचूर॥
जैसे गो-पालक दिखते ही, पशु-कुल को तज देते चोर।
भयाकुलित हो करके भागें, सहसा समझ हुआ अब भोर॥

(१०)

भक्त आपके भव-पयोधि से, तिर जाते तुमको उरधार।
फिर कैसे कहलाते जिनवर, तुम भक्तों की दृढ़ पतवार ?॥
वह ऐसे, जैसे तिरती है, चर्म मसक जल के ऊपर।
भीतर उसमें भरी वायु का, ही केवल यह विभो ! असर॥

(११)

जिसने हरिहरादि देवों का, खोया यश-गौरव-सम्मान।
उस मन्मथ का हे प्रभु ! तुमने, क्षण में मेट दिया अभिमान॥
सच है जिस जल से पल भर में, दावानल हो जाता शान्त।
क्या न जला देता उस जल को ?, बड़वानल होकर अश्रान्त॥

(१२)

छोटी सी मन की कुटिया में, हे प्रभु ! तेरा ज्ञान अपार।
धार उसे कैसे जा सकते, भविजन भव सागर के पार ?॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर लघुता से वे तिर जाते, दीर्घभार से डूबत नाहिं।
प्रभु की महिमा ही अचिन्त्य है, जिसे न कवि कह सकें बनाहिं॥

(१३)

क्रोध-शत्रु को पूर्व शमन कर, शान्त बनायो मन-आगार।
कर्म-चोर जीते फिर किस विध, हे प्रभु अचरज अपरम्पार॥
लेकिन मानव अपनी आंखों, देखहु यह पटतर संसार।
क्या न जला देता वन-उपवन, हिम-सा शीतलविकट तुषार॥

(१४)

शुद्ध स्वरूप अमल अविनाशी, परमातम सम ध्यावहिं तोय।
निज मन कमल-कोष मधि ढुंढ़हिं, सदा साधु तजि मिथ्या-मोह॥
अतिपवित्र निर्मल-सु-कांति युत, कमलकरिणका बिन नहिं और।
निपजत कमल बीज उसमें ही, सब जग जानहिं और न ठौर॥

(१५)

जिस कुधातु से सोना बनता, तीव्र अग्नि का पाकर ताव।
शुद्ध स्वर्ण हो जाता जैसे, छोड़ उपलता पूर्व विभाव॥
वैसे ही प्रभु के सु-ध्यान से, वह परिणति आ जाती है।
जिसके द्वारा देह त्याग, परमात्मदशा पा जाती है॥

(१६)

जिस तन से भवि चिन्तन करते, उस तन को करते क्यों नष्ट।
अथवा ऐसा ही स्वरूप है, है दृष्टान्त एक उत्कृष्ट॥
जैसे बीचवान बन सज्जन, बिना किये ही कुछ आग्रह।
झगड़े की जड़ प्रथम हटाकर, शान्त किया करते विग्रह॥

(१७)

हे जिनेन्द्र तुम में अभेद रख, योगी जन निज को ध्याते।
तव प्रभाव से तज विभाव वे, तेरे ही सम हो जाते॥
केवल जल को दृढ़-श्रद्धा से, मानत है जो सुधा समान।
क्या न हटाता विष विकार वह, निश्चय से करने पर पान ?॥

(१८)

हे मिथ्या-तम-अज्ञान रहित, सु ज्ञानमूर्ति ! हे परम यती।
हरिहरादि ही मान अर्चना, करते तेरी मन्दमती॥
है यह निश्चय प्यारे मित्रो, जिनके होत पीलिया रोग।
श्वेत शंख को विविध वर्ण, विपरीत रूप देखें वे लोग॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(१९)

धर्म - देशना के सु-काल में, जो समीपता पा जाता।
मानव की क्या बात कहूँ तरु, तक अ-शोक है हो जाता ॥
जीववृन्द नहिं केवल जागत, रवि के प्रकटित ही होते।
तरु तक सजग होत अनि हर्षित, निद्रा तज आलस खोते ॥

(२०)

है विचित्रता सुर बरसाते, सभी ओर से सघन-सुमन।
नीचे डंठल ऊपर पंखुरी, क्यों होते हैं हे भगवन ॥
है निश्चित सुजनों सुमनों के, नीचे को होते बन्धन।
तेरी समीपता की महिमा है, है वामा—देवी नन्दन ॥

(२१)

अति गम्भीर हृदय-सागर से, उपजत प्रभु के दिव्य वचन।
अमृततुल्य मान कर मानव, करते उनका अभिनन्दन ॥
पी-पीकर जग-जीव वस्तुतः, पा लेते आनन्द अपार।
अजर अमर हो फिर वे जगकी, हर लेते पीड़ा का भार ॥

(२२)

ढुरते चारु-चँवर अमरों से, नीचे से ऊपर जाते।
भव्यजनों को विविधरूप से. विनय सफल वे दर्शाते ॥
शुद्धभाव से नतशिर हो जो, तव पदाब्ज में झुक जाते।
परमशुद्ध हो ऊर्ध्वगती को, निश्चय करि भविजन पाते ॥

(२३)

उज्ज्वल हेम सुरत्न-पीठ पर, श्याम सु-तन शोभित अनुरूप।
अतिगम्भीर सु-निःसृत वाणी, बतलाती है सत्य स्वरूप ॥
ज्यों सुमेरु पर ऊंचे स्वर से, गरज गरज घन बरसें घोर।
उसे देखने सुनने को जन, उत्सुक होते जैसे मोर ।-

(२४)

तुव तन भा-मण्डल से होते, सुरतरु के पल्लव छवि-छीन।
प्रभु प्रभाव को प्रकट दिखाते, हो जड़ रूप चेतना हीन ॥
जब जिनवर की समीपतातें, सुरतरु हो जाता गत-राग।
तब न मनुज क्यों होवेगा जप, वीतराग खो करके राग ? ॥

(२५)

नभ-मंडल में गूंज गूंज कर, सुरदुन्दुभि कर रही निनाद।
रे रे प्राणी आतम हित नित, भज ले प्रभु को तज परमाद ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मुक्ति धाम पहुंचाने में जो, सार्थवाह बन तेरा साथ।
देंगे त्रिभुवनपति परमेश्वर, विघ्नविनाशक पारसनाथ ॥

(२६)

अखिल-विश्व में हे प्रभु ! तुमने, फैलाया है विमल-प्रकाश।
अतः छोड़ कर स्वाधिकार को, ज्योतिर्गण आया तव पास ॥
मणि-मुक्ताओं की झालर युत, आतपत्र का मिष लेकर।
त्रिविध-रूप धर प्रभु को सेवें, निशिपति तारान्वित होकर ॥

(२७)

हेम रजत-माणिक से निर्मित, कोट तीन अति शोभित से।
तीन लोक एकत्रित होके, किये प्रभू को वेष्ठित से ॥
अथवा कान्ति-प्रताप-सुयस के, संचित हुये सुकृत से ढेर।
मानो चारों दिशि से आके, लिया इन्होंने प्रभु को घेर ॥

(२८)

झुके हुये इन्द्रों के मुकुटों, को तजि कर सुमनों के हार।
रह जाते जिन चरणों में ही, मानो समझ श्रेष्ठ आधार ॥
प्रभु का छोड़ समागम सुन्दर, सु-मनस कहीं न जाते है।
तव प्रभाव से वे त्रिभुवनपति !, भव समुद्र तिर जाते हैं ॥

(२९)

भव-सागर से तुम परान्मुख, भक्तों को तारो कैसे।
यदि तारो तो कर्म-पाक के, रस से शून्य अहो कैसे ॥
अधोमुखी परिपक्व कलश ज्यों, स्वयं पीठ पर रख करके।
ले जाता है पार सिन्धु के, तिरकर और तिरा करके ॥

(३०)

जगनायक जगपालक होकर, तुम कहलाते दुर्गत क्यों ?।
यद्यपि अक्षर मय स्वभाव है, तो फिर अलिखित अक्षत क्यों ?॥
ज्ञान झलकता सदा आप में, फिर क्यों कहलाते अनजान।
स्व-पर प्रकाशक अज्ञ जनों को, हे प्रभु ! तुम ही सूर्य समान ॥

(३१)

पूरव वैर विचार क्रोध करि, कमठ धूलि बहु बरसाई।
कर न सका प्रभु तव तन मैला, हुआ मलिन खुद दुखदाई ॥
कर करके उपसर्ग घनेरे, थकि कर फिर वह हार गया।
कर्मबन्ध कर दुष्ट प्रपंची, मुँह की खाकर भाग गया ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(३२)

उमड़ घुमड़ कर गर्जंत बहुविधि, तड़कत विजली भयकारी।
बरसा अति घनघोर दैत्य ने, प्रभु के सिर पर कर डारी॥
प्रभु का कछु न बिगाड़ सकी वह, मूसल सी मोटी धारा।
स्वयं कमठ ने हठधर्मी वश, निग्रह अपना कर डारा॥

(३३)

कालरूप विकराल वक्ष विच, मृत मुंडन की धरि माला।
अधिक भयावह जिनके मुख से, निकल रही अग्नीज्वाला॥
अगणित प्रेत पिशाच असुर ने, तुम पर स्वामिन भेज दिये।
भव भव के दुखहेतु क्रूर ने, कर्म अनेकों बांध लिये॥

(३४)

पुलकित वदन सु-मन हर्षित हो, जो जन तज माया जंजाल।
त्रिभुवनपति के चरण-कमल की, सेवा करते तीनों काल॥
तुव प्रसादतैं भविजन सारे, लग जाते भवसागर पार।
मानवजीवन सफल बनाते, धन्य धन्य उनका अवतार॥

(३५)

इस असीम भव-सागर में नित, भ्रमत अकथ दुख पायो।
तोऊ सु-यश तुम्हारो सांचो, नहिं कानों सुन पायो॥
प्रभु का नाम-मन्त्र यदि सुनता, चित्त लगा करके भरपूर।
तो यह विपदारूपी नागिन, पास न आती रहती दूर॥

(३६)

पूरव भव में तव चरनन की, मनवांछित फल की दातार।
की न कभी सेवा भावों से, मुझ को हुआ आज निरधार॥
अतः रंक जन मेरा करते, हास्य सहित अपमान अपार।
सेवक अपना मुझे बनालो, अब तो हे प्रभु जगदाधार॥

(३७)

दृढ़ निश्चय करि मोह-तिमिर से, मुंदे मुंदे से थे लोचन।
देख सका ना उनसे तुमको, एक बार हे दुखमोचन॥
दर्शन कर लेता गर पहिले, तो जिसकी गति प्रबल अरोक।
मर्मच्छेदी महा अनर्थक, पाता कभी न दुख के थोक॥

(३८)

देखा भी है, पूजा भी है, नाम आपका श्रवण किया।
भक्तिभाव अरु श्रद्धापूर्वक, किन्तु न तेरा ध्यान किया॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसलिये तो दुःखों का मैं, गेह बना हूँ निश्चित ही।
फले न किरिया बिना भाव के, है लोकोक्ति सुप्रचलित ही॥

(३९)

दीन दुखी जीवों के रक्षक, हे करुणासागर प्रभुवर।
शरणागत के हे प्रतिपालक, हे पुण्योत्पादक! जिनवर॥
हे जिनेश! मैं भक्तिभाव वश, शिर धरता तुमरे पग पर।
दुःखमूल निर्मूल करो प्रभु, करुणा करके अब मुझ पर॥

(४०)

हे शरणागत के प्रतिपालक, अशरण जन को एक शरण।
कर्मविजेता त्रिभुवन नेता, चारु चन्द्रसम विमलचरण॥
तव पद-पंकज पा करके हे, प्रतिभाशाली बड़भागी।
कर न सका यदि ध्यान आपका, हूँ अवश्य तव हतभागी॥

(४१)

अखिल वस्तु के जान लिये हैं, सर्वोत्तम जिसने सब सार।
हे जगतारक! हे जगनायक! दुखियों के हे करुणागार॥
बन्दनीय हे दयासरोवर! दीन दुखी की हरना त्रास।
महा-भयंकर भवसागर से, रक्षा कर अब दो सुखवास॥

(४२)

एकमात्र है शरण आपकी, ऐसा मैं हूँ दीनदयाल।
पाऊं फल यदि किंचित करके, चरणों की सेवा चिरकाल॥
तो हे तारनतरन नाथ हे, अशरण शरण मोक्षगामी।
बने रहें इस परभव में, बस मेरे आप सदा स्वामी॥

(४३)

हे जिनेन्द्र! जो एकनिष्ठ तव, निरखत इकटक कमल-बदन।
भक्तिसहित सेवा से पुलकित, रोमांचित है जिनका तन॥
अथवा रोमावलि के ही जो, पहिने हैं कमनीय वसन।
यों विधिपूर्वक स्वामिन् तेरा, करते हैं जो अभिनन्दन॥

(४४)

जन-दृग रूपी 'कुमुद' वर्ग के, विकसावनहारे राकेश।
भोग भोग स्वर्गों के वैभव, अष्टकर्म मल कर निःशेष॥
स्वल्पकाल में मुक्तिधाम की, पाते हैं वे दशाविशेष।
जहां सौख्य साम्राज्य अमर है, आकुलता का नहीं प्रवेश॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Raj Rajeshwar

The forefathers* of late Officer RAJ RAJESHWAR, born on 4th February, 1934, were residents of Sanghiyan Street, Saharanpur (Uttar Pradesh). It is stated that the earliest of them organised and led a pilgrimage to the holy places in India and on this account his locality was so named. Public service formed one of their chief hobbies and the foremost man of the family served the community as its Chaudhri (chief).

Rajeshwar was initially educated at the Harcourt Butler Higher Secondary School, New Delhi, the Bhonsla Military School, Nasik and the Hindu College, Delhi University. At Nasik he learnt for two years, in addition to academic subjects, riding, shooting. swimming and various other manly games. After passing written test by UPSC and succeeding in the group tests of the I.A.F. Selection Board he remained under training as Cadet and Flight Cadet respectively at the Joint Services Wing of the National Defence Academy, Dehra Dun, and No. 2 Air Force Academy, Jodhpur. His particular hobbies were photography and rowing. He became expert in all processes of

---

*Founder of YASHASWI Family

CHAUDHARI JASSA MAL

|

Chaudhari Buland Rai (Ex. 5-5-1904)

|

Lala Baru Mal Khazanchi (Ex. 13-6-1929)

|

Sukhmal Chandra Jain

|

Raj Rajeshwar R. Mahendra R. Arinjaya A. Abhimanyu S.V. Tathagat

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

photography and possessed his own costly and most up-to-date photographic apparatus. Extracts from his letters written to me describing his thrill, enjoyment and interest in aviation are published with a view to inspire the young ones to join military career and serve the Motherland.

He was commissioned in the General Duties (Navigation) Branch of the Indian Air Force on the 16th April, 1955. He had hardly served his beloved country for one and a half years when he was killed in an aircrash on 2nd October, 1956, at Bhuj while employed on air force duties. The I.A.F. gave him a funeral at Delhi with full military honours. At this terrible national loss the Minister for Defence, Dr. K.N. Katju, personally felt as if he had lost a near and dear one himself. His sudden and premature departure grievously hit his parents, brothers, sisters, numerous relatives, friends and admirers. Besides the officers and men of his No. 12 (Transport) Squadron, General S,M. Shrinagesh, Chief of the Army Staff, and Air Commodores R. H. D. Singh and Arjan Singh D. F. C. (now Air Marshal—Chief of the Air Staff) mourned his loss.

	Day	*Night*	*Total*
Gliding (7 flights)	.55	—	.55
Pilot			
Dual	66.40	2.15	68.55
Solo	34.45	—	34.45
Navigator	784.20	66.15	850.35
	885.60	68,30	953.90

During his brief active service career the Hero was mostly engaged on flying supplies to our forces stationed at various strategic points on the frontiers, and rendering similar support to civil population distressed on account of floods, etc. For

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

most of the time his duty lay in navigating his aircraft through hazardous narrow gorges in mountainous regions. The record of his flying hours given in the Table above will be of interest.

Jains are generally known as belonging to a business community, far removed from armaments and war-craft due to their occupation as well as their avowed creed of non-violence. It is not, however, realised that all the twenty-four Tirthankaras as well as the 39 supermen Emperors of the Jain mythology were Kshatriyas of the noblest martial families. The Jain ideal is to lead a life full of grace and high position whilst as householder and unstinted meditation and renunciation leading to complete self-realisation in the last quarter. The following couplets in honour of the sixteenth Tirthankar, Bhagwan Shantinathji vividly describe the Jain attitude towards Life :

विधाय रक्षां परतः प्रजानाम् राजा चिरं योऽप्रतिमप्रतापः ।
व्यधात्पुरस्तात्स्वत एव शांतिर्मुनिर्दयामूर्तिरिवाघशान्तिम् ।।
चक्रेण यः शत्रुभयंकरेण जित्वा नृपः सर्वनरेन्द्रचक्रम् ।
समाधिचक्रेण पुनर्जिगाय महोदयो दुर्जयमोहचक्रम् ।।

"As emperor of unequalled prowess and splendour who for long protected his subjects from all outside onslaughts and who in later years, annihilated sin by manipulating spiritual force. Who whilst reigning wielded Sudarshan Chakra, terror for enemies, and subjugated all kings ; and who later conquered the organisation of the Inner Enemy (Infatuation) by the forces of self-meditation and attained Salvation."

In view of the above it is needless to reassert what Jainism stands for. Rajeshwar, while only in his teens, understood this ideal and resolved to translate it into reality. Rajesh played with death all along and consequently attained fearlessness. By his example he has infused fearlessness

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

in his survivors too. It is regretted that he was not permitted by destiny to lead the second portion of a Jain Hero's life.

I had always advised (with practical lead) my co-realigionists and my community to send at least one scion from each family to the Armed forces in order to fulfil our obligations towards maintenance of our Motherland's Independencc, This mishap does not alter the situation in any way. The mishap was also not improbable. We must not be deterred by any such mishap from doing our duty.

It is rather unusual but all the imaginable good qualities had made their abode in Rajeshwar. He was obedient and respectful towards elders. He was very generous and full of love and affection towards his sisters and brothers, friends and colleagues. He was full of energy and blooming health, always smiling and laughing. He never smoke, never drank, and of course he was a vegetarian. He had a pleasant disposition and he was ready to labour, spend and sacrifice for others. He loved and liked his job extremely well. Had Death spared him for some time what could not be expected of him?

May his pure soul attain Salvation very soon and enjoy al Bliss during the interim period.

All who had known him will remember him for ever.

Letters to his Father

Jodhpur : 9-3-5

To day I am writing you about my most wonderful fligh which I did on Saturday afternoon. I was the only chap to fl that day and it was so very well done that I was congratulate by many officers. Flt. Lt. Eziekle said that after the fligh

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

with my glider and with my goggles on my forehead, I looked like Wilbur Wright when he had first flown the aircraft.

On Saturday morning we were inoculated and vaccinated. In the afternoon our left hands were terribly paining and we were in no mood to do any thing. But our Flight Commander, Flt. Lt. King Lee said, "Nothing doing and you will have to come for flying". Any way we went there and skid of the aircraft had to be tested. Every body said that they had pain and fever and all that, but I volunteered to go.

It was a single seater glider, and in the appearance it resembled Wright Bros. first machine. It doesn't have any wheels below, and is pushed on a skid. About a month back all the steel skids of this aircraft got worn off. Each skid lasted 20 launches. As new skids could not be imported, this glider was lying useless. So now they put a wooden skid and they wanted to sec how long it lasted.

I strapped myself in my seat, put the goggles on my eyes and signalled the jeep to move. The jeep was driven at 35m.p.h, and stopped after about 800 yds. I managed the wings very well and every now and then I used to get bounced into the air in the next launch they drove the jeep at 40 m.p.h. At first I was sliding on the ground. There was lot of stones and there was lot of dust all around making the visibility very poor. Suddenly all the noise of crackling stones stopped. There was no friction and I was having a very smooth ride. At the same time all the dust was cleared and I saw the rope sagging in front of me, I was startled and looked at the ground. To my astonishment I found myself 2′ above the ground. After that I went on rising and at 6 feet I put the aircraft in level flight. Then I wanted to land with no knowledge of how to do it. Then I saw the jeep getting slow and so I slowly put the glider into descending position.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

I approached the ground very well but there was a bang as the aircraft landed and I saw the rope flying away. When the jeep stopped they found me a bit behind and so they came to me to ask why I released the rope. I told them that I never released and then it was found out that the link was broken. At that time I was congratulated by every officer and was told that I managed the kite very well.

After that the link of the rope was replaced by an airman and I started off for my third slide backwards. This time I was told not to let the kite get airborne. Every time there was the tendency to get airborne but I never allowed her to do so. All the time I was going perfectly straight and with the wings perfectly level. After my third slide, it was found out that the skid was completely worn out. After this test it was found that wooden skids are useless for the gliders.

My regular 63rd Pilot Course has started. I am very busy. JSW chaps have to reach aerodrome at 6 A.M. for gliding. From 9.00 to 13.30 we have our ground subjects. At 2.30 P. M. again we have to come to aerodrome for gliding and we are left off at 6. Our studies are quite tough and we have to work like anything until our 'Prentice' flying starts.

Jodhpur : 13-5-53

Jai Jinendra. Today I am going to give you the most wonderful news of my life. Today I have become a pilot in true and real sense, because I alone took the aircraft upto a height of 800' and landed with such perfection which was not reached by any other pupil-pilot uptill now. Today 7. O'clock was a great moment in my life.

Squadron Leader ENGINEER praised my flight and congratulated me twice. At first he came running to my aircraft as soon as I landed, shook hands with me and then praised my

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

flying in general and landing in particular. Then again he shook hands with me and told me that I deserved the congratulations twice. As soon as I came back to the crew room, Flt. Lt. GOODMAN congratulated me. After that all the cadets and various officers cangratulated me.

Today I went to the crew room at 5,30 A.M. After putting on my flying suit, I got parachute issued. Soon after I was called by Sq. Ldr. ENGINEER for briefing. He began by asking. "How do you do Rajeshwar" (He aad Flt. Lt. GOODMAN pronounce my name as Rajeshwar). Then he said "O.K. Chappy, today the weather is cool and nice. The wind is also not very strong, and it is qnite steady. so let us get cracking."

Then he told me to start and warm up the engine of aircraft No. 19. As I finished with it he came with his parachute and took his seat on my right hand side. I took the taxy clearance from the Central Tower and taxied to the runway. I did some vital action before take-off. After that I took off, did a normal circuit around the airfield and then landed. The very first landing was a perfect three-pointer. Sq. Ldr. ENGINEER jokingly asked me whether it was a fluke. Then he told me to show two more landings. When I landed the third time, he got out of the cockpit and wished me "Happy Landing".

It was a great moment for which I was waiting and waiting very impatiently. But when it came, slight nervousness also came with it. Nervousness was soon overcome with determination. Then the feeling came that I was the Captain of the aircraft and the power of the Captain flashed before my eyes, Perhaps more thoughts would have come but I had no time to attend to them.

At once I released my brakes, checked sufficient fuel, sparking plugs, and movements of controls. Then I lined up

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

straight for take-off and tightened and locked my safety harness, So I was all set for a take-off. For a second I looked back and waived to Sq. Ldr. ENGINEER, who in turn smilingly waived and I started opening throttle. As the aircraft started rolling, I gave her more and more of throttle, until it was full throttle. Quickly I checked up the instruments, Boost--2. R.P.M--2600. So everything was correct.

Meanwhile the tail came up and the plane was gathering more and more speed. Soon after she started bouncing and was showing her unwillingness to remain on the gronnd. So I eased the stick slightly back and helped her to get off the ground. I kept her in a level attitude until the speed built to 70 knots. Then I got her in the climbing attitude and applied brakes to stop the wheels rotating. Then I trimmed the aircraft to fly hands off thc controls. I removed my hands and feet from the controls and the aircraft was going in the desired direction and altitude all by herself. Then I made the pitch a bit course (pitch is the angle of the propellor blades : it can be varied in all heavy aircrafts and some trainers like mine).

Then I had some time to think af anything else. Your picture came before my eyes, when you used to call me a VIDYADHAR. I felt that I was better than them even. Vidyadhars probably had to use some physical effort to fiy, whereas I could fly fully relaxed and comfortably seated,

Soon I realised the need to check all engine instruments and meanwhile I reached 400'. Then I looked around for other aircrafts and birds and turned right and I kept on climbing. Again thoughts came to my mind. I was flying over the town. The houses were spread in a vast area. I reached 800' and so I levelled out my kite, reduced power and turned to the right.

Again I checked up my instruments, particularly the engine firewarning light, but every thing was correct. Then I saw an-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

other aircraft in front of me. I felt as though I was a fighter pilot and I was constantly firing my machine gun at him. The picture came before my eyes as though he was shot very badly and caught fire. I could see him getting out of control and diving straight to the mother earth.

Soon I reached the magnificent Maharaj's palace. Thoughts came that doing low-flying to impress a girl had been the cause of his death. I had no more time to think and exactly over the dome of the place I started turning. Now I was at 90° to the runway and was busy in looking around for the aircrafts. Landing area was crowded up by quite a number of aircrafts but I decided to land beside the taxying track. I looked at the wind sock to judge the wind strength and direction and then I cut my throttle and put the aircraft in a glide approach. Then I turned towards the landing ground and straightened out.

Again I checked up my speed and now I was watching the ground like a hawk. Soon I found the ground coming up to meet me and I could see the small stones distinctly. I raised the nose of my aircraft a bit and went on rounding her off until I was only one foot above the ground and I made her float straight and level. She was trying hard to sink on the ground, but I was keeping on pulling back on the stick to prevent her doing so. A time came when the stick was all the way back and the ground speed was dropping fast. At that stage my kite gently touched down on all her three wheels and went on rolling forward on the ground.

Once the aircraft lands, she has the tendency to move right and left and all over the show. If we dont correct it fast enough, she starts swinging in a circle around her tail wheel. So I was watching the tendency of the nose of my kite and was constantly making corrections. At last she stopped, Then I went on to the taxying track and did certain vital actions and

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

checks. After that I took my kite to Sq. Ldr. ENGINEER who came rushing and started praising my flight. After that we came to the dispersal area and parked our aircraft.

One has to celebrate the first solo ceremony. At lunch time I had to stand drinks to all my friends. I had to sign for 60 orange squashes. Well anyway, atleast I have done my solo in a reasonable time of 18 hours. Actually my general flying and take-offs were quite O.K. after my seventh hour. It is the landing, which is a difficult thing to pick up easily.

Jodhpur : *23-5-53*

I am doing quite well in flying and am having the happiest days. In my last three sorties I had plenty of fun, thrill and adventure. I am writing below a brief account of my flying after the first solo.

In my last letter I described my solo around the air-field. It is known as 'circuit and landing'. In first solo we do only one circuit and landing. In second solo we do two, in third we do three and in fourth solo we do four circuits and landings. Before my solo I had put in 18 hours of circuit and landing and so, we both; myself and my instructor were completely fed up. As soon as I did my first solo my instructor jokingly asked me as to how long will I keep on going round the circuit like a mad man. Well anyway, I soon completed my four solos and now came the time to go far-far away from the air-field and to have some fun.

So on Wednesday we went on a dual sortie. From the time we took off, my instructor started showing me various-pin-points. We were steering a steady course and we were cutting the railway line very frequently. I was told to steer along the railway line whenever I was doubtful about my compass bearing.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

My instructor held the controls until we reached Banar village. Then he gave me the controls and told me to do spiral climbing turns over the village until I reached 5,000 feet. After that he started teaching me acrobatics. First he told me all about the precautionary measures. We checked up sufficient fuel, harness tight, no loose article in the aircraft and hood closed. Then we checked up the emergency landing field, and no built up area below. Then we turned through 360° to ensure that there was no other aircraft nearby. Then we started the exercise 'spinning'.

We closed throttle. The aircraft had the tendency to go down but we prevented it by keeping on pulling back on the stick. At last the aircraft started shuddering and the stick was all the way back in my stomach. So suddenly the nose dropped and one wing dropped. The aircraft was fast diving towards the ground in a tight spiral, and it seemed that it was absolutely out of control. Then we recovered by puting the stick forward and applying opposite rudder. Then we found the aircraft diving straight towards the ground, so we started easing the stick back and opening the throttle, and so again we found the plane flying straight and level.

After this my instructor told me to practise five or six spins and I did them quite efficiently, One can never forget the sensation of first spin. It looks that the whole world is rotating and revolving at a supersonic speed. One feels physically very uneasy and to tell the truth, he feels scared also. But one gets quite used to it after some time.

That day I learnt loops, procedure of forced landing and homings. A few days back Air Force C-in-C came here, Air Marshal Chapman gave us three maxims : 1. Never adopt the line of least resistance, 2. Talk less, listen more and, 3. Always seek adventure.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

卐 रात्रि में आकाश विहार 卐

मैं वायुयान में काफी सैर कर चुका हूँ। इसमें हर तरह की कलाबाजियां, जिनको जमीन पर खड़े होकर देखने में डर लगता था, वे मैं अकेले कर चुका हूँ। जमीन से केवल २० फुट ऊपर भी उड़ चुका हूँ और इससे १८,००० फुट ऊपर उड़कर नन्दादेवी के बर्फीले पहाड़ों की भी सैर कर चुका हूँ। पर रात्रि में आकाश विहार का आनन्द कुछ निराला ही था, वह भी जब पूर्णिमा का चन्द्र व असंख्य तारे आकाश में अपनी छटा दिखा रहे हों। शायद किसी कवि ने भी अभी तक ऐसे दृश्य की कल्पना न की होगी।

सोमवार का दिन शायद इस जोधपुर जैसी नीरस और महाशुष्क जगह में मेरे लिए सबसे अधिक आनन्ददायक था। यह रक्षा-बन्धन का दिन था और सुबह हम अपनी प्रिय बहनों की भेजी हुई राखियें पहने हुए थे, सारा दिन कुछ कुछ वर्षा भी हुई थी इसलिए जोधपुर जैसी जगह में भी उस दिन देहरादून का मजा आ रहा था।

हमें ६ बजे Crew room में बुलाया गया और एक घंटे तक briefing दी गई। तत्पश्चात् मैंने तथा मेरे नवीन शिक्षक श्री हैरिन्गटन ने अपने अपने पैराशूट लिये तथा जहाज का भली भांति निरीक्षण करने के बाद 'कोक-पिट' में बैठे। हमने 'विंग—टिप्स' की व 'टेल लाइट' जलाई। उसके बाद हमने एन्जिन 'स्टार्ट' किया। 'कोकपिट' में बिल्कुल अंधेरा रहता है और हम तमाम स्विच, लिवर और बटन आदि हाथ से टटोल कर ढूंढ़ते हैं। अगर हम भूल से किसी बटन के बदले एंजिन की बैटरी का बटन बन्द कर दें तो आप सोच सकते हैं नतीजा क्या होगा।

खैर 'स्टार्ट' करने के बाद हम धीरे-धीरे 'रन-वे' की ओर चले। एक जगह वर्षा से जमीन बहुत नर्म हो गई थी तथा मेरे विमान के पहिए उसमें धंस गए। हमको निकालने, जल्दी-जल्दी एक विशाल क्रेन आया। जब तक वह आया तब तक हम किसी तरह वायुयान के इंजन का 'फुल-थ्रोटल' खोल कर कीचड़ से बाहर निकल गए परन्तु वह क्रेन वहीं पर बुरी तरह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धंस गया तथा अगले दिन सुबह तक नहीं निकल पाया। इस तरह हम रन-वे, के पास तक पहुंचे, वहां ग्राउन्ड-क्रयु ने हमारे टायर आदि 'चैक' किए।

जब हम तैयार हो गए तो हमने एक रोशनी से 'एयर कण्ट्रोल पाइलेट' को सिगनल' भेजा, कुछ समय बाद उसने भी बहुत तेज हरे रंग की रोशनी से वैसा ही सिगनल भेजा। तत्पश्चात् हम 'रन-वे' पर पहुंचे और एक बार फिर 'ब्रेक' लगा कर 'एन्जिन' को 'टेस्ट' कर लिया। इसके बाद हम 'टेक-आफ' कर गए।

दिन में 'टेक-आफ' बहुत आसान होता है परन्तु रात को बहुत सावधान रहना पड़ता है। 'रनवे' के दोनों ओर 'सौ-सौ गज' के फासले पर मिट्टी के तेल की मशालें रखी हुई होती हैं। हम दोनों ओर की मशालोंके बीच बीच में रहने की कोशिश करते हैं। मैं बतला चुका हूँ कि 'कोकपिट' में अंधेरा रहता है तो हम 'इन्स्ट्रूमेन्ट्स (Instruments) कैसे देखते हैं। हमारे Instruments में रेडियम लगा होता है तथा वे रात को चमकते हैं। हम रात को सिर्फ इन्स्ट्रूमेंन्ट्स की सहायता से चलते हैं क्योंकि जमीन पर लाइट्स के सिवा और कुछ दिखाई नहीं देता।

टेक-आफ करने के बाद हम १,५०० फुट तक चढ़े और फिर वायर-लैस से कंट्रोल टावर को सन्देश भेजा "Bravo Leaving Circuit" उसका जवाब आया "Roger"। यानी "आज्ञा मिल गई"। इसके बाद हमने लेविल फ्लाईंग किया और शहर के ऊपर आए। हर जगह पर यानी के महल, किले, तथा वायरलैस पोल्स के ऊपर लाल रोशनी लगी होती है। उन स्थानों पर हम थोड़ा और ऊपर चले जाते थे।

शहर पर उडने का मज़ा निराला ही था। मेरे शिक्षक ने स्वयं कन्ट्रोल ले लिए और मुझे बाहर देखने की आज्ञा दे दी। बाहर देखते ही मेरा तो जीवन सार्थक हो गया। सारा शहर बिजली की रोशनी से जगमगा रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि दिवाली मनाई जा रही हो। ओलम्पिक और मिनर्वा के साइनबोर्ड लाल बत्तियों से जगमगा रहे थे। शहर के आस-पास दो महागन्दी झीलें हैं। उनमें पता नहीं पानी है या नहीं, केवल काई ही काई नजर आती है। दिन के समय, दुर्गन्ध की कल्पना करके मैंने वहां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तक जाने की कभी गलती न की। पर उस समय उसकी भी अद्भुत छटा थी। पूर्णिमा के चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब तथा चमकते हुए पानी के 'रिपल्स' आकाश में २,००० फुट की ऊंचाई से अत्यन्त ही मनोहर दिखाई दे रहे थे। विचार आया कि देखो एक अत्यन्त कुरूप स्त्री भी क्रीम पाउडर आदि लगाने पर आकर्षक लगने लगती है। जोधपुर जैसे शहर का आकर्षक लगना कोई आसान बात नहीं है। इस शहर को देखकर ग्लानि ही अधिक होती है, आकर्षण तो अत्यन्त कठिन है।

खैर हम आधा घंटा घूमकर 'एरोड्रोम' के समीप आए। हमने कन्ट्रोल टावर को कहा "Bravo Joining Circuit" तथा उसने हमें आज्ञा दे दी। उस समय बहुत से वायुयान उतरना चाहते थे। हमने टावर को कहा "Bravo Finals" वहां से जवाब आया "Bravo you are No. 3 to Land" इसलिए हमने कुछ चौड़ा सरकिट कर लिया। जब टावर ने तेज हरी रोशनी हमारे जहाज पर फेंकी तब हमने 'लैन्ड' किया।

मैंने मंगलवार को भी 'नाइट फ्लाइंग' की। पर उस दिन ६०० फुट पर ही बादल मिल गए। ऊपर ही वर्षा होने लग गई। किसी प्रकार जल्दी से हम वापिस आए। कुछ भी हो नाइट फ्लाइंग में आनन्द बहुत आता है।

Letters To his friend Shri Baljit Kapur

Jodhpur : 9-10-54

Thanks for the birthday greetings. Actually, now we are so busy, that it was only due to your letter that I became aware of my birthday. Anyway, I am very grateful to you for the nice quotations* you have given me. I liked most of them, though I may not be agreeing with some of the views expressed.

---

*Is that a birthday ? 't is alas ! too clear,
't is but the funeral of the former year.— Pope
How soon hath time, the subtle thief of youth;
Stolen on his wing my three-and-twentieth year ! —Milton
Through life's roads, so dim and dirty,
I have dragged to three and thirty ;
What have these years left to me ?
Nothing except thirty-three, —Byron
While man is growing, life is in decrease
And cradles rock us near to the tomb
Our birth is nothing, but our death begun.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Some poet described the path of life as dim and dirty. Another said that it is death begun. Well, doesn't life begin with the death ? Although life is still a mystery. No one can tell you the necessity of this vicious circle. But, if we take things in an optimistic way, I am not worried about the death of my previous year, but feel that it gave me lot of variety and fun, and exciting events.

I dont know why some of the poets didn't want their years to pass. Did they want to remain children all through their life ? Or, if you allow me to say, did they want to remain in their mothers' wombs all through their life ? I think I am quite happy about the decrease of my life. I am not the least sorry for it.

Jodhpur : 17-3-54

I liked the extract* you sent me about the Chinese Emperor. What gave cause to the poet's lamentations about life, that I

---

*Nehru's 'Glimpses of World History' engages my attention these days, and an interesting historical event I shall borrow to amuse you :

"In 1792 the British Governmen sent an embassy under Lord Macartney to Peking. George III was then King of England. Chein Lung (Chinese Emperor) received them in audience and there was an exchange of presents. But the emperor refused to make any change in the old restrictions on foreign trade. The answer which Chein Lung sent to George III is a very interesting document and I shall give you a long extract from it. It runs thus :

'.........You, O King, live beyond the confines of my seas. Nevertheless, impelled by your humble desire to partake of the benefits of our civilisation, you have despatched a mission respectfully bearing your memorial.......To show your devotion you have also sent offerings of your country's produce. I have read your memorial ; the earnest terms in which it is cast reveal a respectful humility on your part which is highly praiseworthy.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

have not been able to think out as yet, In fact I am in utter confusion about the whole idea of life. Some say that it is to make others happy and to do something constructive. You conveyed to me Dr. Johnson's wordings, "Nothing is too little for a little creature like man." I cant dare to disagree with that great intellectual giant. But I fail to appreciate it when I am taught subject like Astronomy and Bomb- Sight Theory.

When I am taght how the stars move and how bombs fall and how various phenomena occur in the nature, well at that time confusion occurs in the mind. I dont know what was the necessity of finding out so many imaginary points and lines and create so mnch confusion. These things rather become difficult to comprehend for the unimaginative man.

Probably we can give a modern version to Dr. Johnson's quotation, which can be "Nothing is too little or too big for a creature like man." Man is a peculiar animal. He can go down to the lowest ditch and can also reach the dizzy heights. In man we also find magic people who in their one and a half ounces of brain squeeze the knowledge of any conceivable or unconceivable thing.

(*Contd. form Page 27*)

* Swaying the wide world. I have but one aim in view, namely to maintain a governance and to fulfil the duties of the State; strange and costly objects do not interest me I........... have no use for your country's manufactures. It behoves you, O King, to respect my sentiments and to display even greater devotion and loyalty in future, so that prepetual submission to our Throne, you may secure peace and prosperity for your country hereafter.........

Tremblingly obey; and show no negligence.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Well, probably I should try to give you my impressions about navigation. Here we have to study hell of a lot. Practical navigation is quite easy but the theory plays havoc with us. Navigator is the brain of the Air Force. With him lies all the responsibility. He has to keep a log and chart of the flight which is an official record of the flight and that is the first thing which is asked for at the time of court-martial or any inquiry. Navigators are very well-behaved and disciplined people in Air Force.

In short we have to be very sincere and we can't afford to relax. After commissioning we will have to appear every six months for categorisation. There are lots of examinations. Even now they tell us to carp all the knowledge of all the 18 subjects all the time. They hold surprise tests in any subject at any time. Once we were annoyed and told them our difficulties. The reply was that you can't afford to forget anything. The idea of surprise test is to catch us on the road side and give us a test. We try to avoid our Nav. Officers in the picture-hall. Who knows they may catch us during the interval and give an oral test. Anyway, we should make the most of what we are supposed to do.

I forgot to inform you that while we have to study so much, we are not spared by Physical Fitness Officer. Every afternoon at 4.0 P.M. in the burning sun of Thar desert we have to do one hour of drill. Probably I haven't told you that we are living in tents. In daytime they get very hot and we literally feel that we are in a frying pan. I usually go to a bath-tub with a book and few precis and so I try to kill two birds with one stone, but usually I don't succeed in achieving even one of them satisfactorily.

Dust-storms have already started in Jodhpur. Our tents try to take-off very often. With our unceasing prayers, they some-how remain where they are supposed to remain. About

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

the lights in tent—well, there is one central light for four chaps. It is insulting for the light to be ON by pressing the switch once. Unless you do khat-khat with the switch twenty times, it wont be ON. We have been given a small table fan by MES after lot of trouble and filling various proformas and all. That fan usually doesn't start. Switch alone fails to start it. In addition we have to hit it a couple of times to make it start. Sometimes we have to hit with a shoe and sometimes we bang it against the ground to give it initial velocity and then alone it starts. Now, once it starts—well, it just won't stop unless we take the plug and everything out and some-how check the flow of electricity.

I am in no way grumbling against all these things. On the contrary I am enjoying these phenomena and probably I can boast that I can bear all these things in treacherous desert like Jodhpur.

※

Learning which is the mark of intellectual development would not be enough to make the worth of a personality. Even a learned man if he does not follow the precepts of great sages and strictly cultivate moral excellence adopting the path of right conduct, his learning will be of no avail.

—*Tirukkural*

※

Self knowledge, that is knowledge of the true and essential virtue of the SOUL, is the one means of imparting confidence in life. It will dispel all ugly dispositions of the mind, and all such evil and harmful characteristics as the inferiority complex. If the heart is fortified with it, you will go through life with assurance and as a hero. All your undertakings will then bear fruit, and success itself will eagerly rush forward to catch you up, instead of lagging behind.

—*Champat Rai Jain*

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यह संसार--जैसा मैंने देखा

रत्नदीप में स्थान कम है और पाठकों के पास समय कम है। मेरे में भी ज्ञान और शक्ति कम है। फिर भी रत्नदीप के प्रधान सम्पादक का स्नेहपूर्ण आग्रह है कि मैं इस जीवन के सम्भवतः अन्तिम मोड़ पर मुड़कर ओझल होने से पहले संक्षेप में अपने अनुभव का सार तो लिपिवद्ध करने का प्रयत्न करूँ ही।

संसार एक खुली पुस्तक है। फिर भी सब संसारी जीव इसको अपनी अपनी शक्ति तथा रुचि की भिन्नता के कारण अलग अलग प्रकार से पढ़ते हैं। "जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति तिन देखी तैसी" की तरह से संसार के स्वरूप को भी सब अपनी अपनी भावना के अनुसार ही देखते हैं।

अलग अलग देखें—यह तो स्वाभाविक हुआ—परन्तु प्रत्येक बलवान व्यक्ति (विद्या, धन, अधिकार, कुल, जाति, शारीरिक शक्ति, वैज्ञानिक जानकारी, तपस्या, जवानी का जोश, वचन-बल, लेखन-कला आदि के कारण बलवान) दूसरे सब व्यक्तियों पर अपनी दृष्टि और अपना मत लादने की कोशिश करता है। जो व्यक्ति उससे निर्बल होते हैं वे उसकी लपेट में आ ही जाते हैं। जो समान या अधिक बलवाले होते हैं उनके साथ तुमुल युद्ध होता रहता है।

इस प्रकार यहाँ आध्यात्मिक क्षेत्र में अनेक मत-मतान्तर परस्पर शत्रु बने हुये हैं तथा आध्यात्मिकता को कलंकित कर रहे हैं। राजनैतिक क्षेत्र में यह पृथ्वी राज्यों में बंटी हुई है जो परस्पर अधिकाधिक सत्ता प्राप्त करने के लिए अणुबम आदि संहारक वस्तुओं के निर्माण तथा परीक्षण में ही अपनी अल्प-शक्ति तथा संपत्ति का अपव्यय कर रहे हैं। आर्थिक क्षेत्र में यहां श्रमिकों और संपत्तिशालियों के बीच संघर्ष छिड़ा हुआ है, जिसका असर राजनैतिक क्षेत्र में प्रस्फुटित हो रहा है। तथा-कथित साहित्य और कला के क्षेत्रों में भी इसी प्रकार बेइमानी के आधार पर गुट बने हुये हैं क्यों कि उत्कृष्ट की परख की शक्ति तथा उत्कृष्ट की ओर रुचि तो इस निकृष्ट, मद-मत्त, अनैतिक, कलह-प्रिय, अशिक्षित तथा असभ्य संसार में हो ही नहीं सकती। यह गुट भी परस्पर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पत्र-पत्रिकाओं, आलोचकों तथा संस्थाओं के माध्यम से बराबर लड़ते रहते हैं। सब प्रकार के उपर्युक्त क्षेत्र अपना अपना प्रभाव राजनैतिक क्षेत्र में स्थापित करने का लक्ष्य रखते हैं क्योंकि राजनैतिक शक्ति ही जनता की स्वामिनी शक्ति है।

एक व्यक्ति जरा समझ प्राप्त करते ही देखता है कि वह उस मत का अनुयायी माना जा रहा है जिस मत के अनुयायी उसके माता-पिता हैं तथा शेष मत-मतान्तरों वाले अनेक प्रकार से उसका मत-परिवर्तन करने के लिये प्रयत्नशील हैं। वह देखता है कि वह किसी एक राष्ट्र का निवासी है तथा संसार के शेष स्थानों पर वह विना अपने स्वामी राष्ट्र की स्वामिनी राजनैतिक सत्ता की आज्ञा के विना जा नहीं सकता है और उन शेष स्थानों में भी उन उन स्थानों की स्वामिनी राज-सत्ता की आज्ञा के विना प्रवेश नहीं कर सकता हैं। आर्थिक क्षेत्र में भी उसे अवसर के अनुसार कोई व्यवसाय लेना पड़ता है जिसकी रक्षा के लिए उसे संसार की प्रवृत्ति के अनुसार ही अपना पार्ट खेलना पड़ता है। साहित्य-संगीत-कला का भी उसे अपने को मर्मज्ञ घोषित करना पड़ता है अन्यथा इन क्षेत्रों द्वारा उसे पुच्छ-विषाण-हीन पशु की उपाधि प्राप्त होती है।

वह देखता है कि माता-पिता उससे सेवा की तथा कुल के उत्कर्ष की आशा करते हैं। भाई-वहन, मित्र, सम्बन्धी, उससे हर प्रकार की सहायता की आशा करते हैं। धर्म संगठन, समाज-संगठन तथा राष्ट्र उससे तन-मन-धन से सेवा की तथा अवसर पड़ने पर प्राणों के वलिदान तक की आशा करते हैं। स्त्री-पुत्रादि अपना यह अधिकार मानते हैं कि वह केवल उनके ही रक्षण-भरण-पोषण में अपने सब समय तथा शक्तिओं का उपयोग करे। साहित्य संगीत कला के संस्थान उससे अपनी-अपनी प्रवृत्तियों में सहायता पाने की आशा करते है। व्यवसाय अपना अधिकार मांगता ही है कि जिस थाली में भोजन कर रहा है उसमें छेद तो न करे।

इन विषम परिस्थितियों, अपनी अल्प शक्ति, तथा चारों ओर दूसरे व्यक्तियों के अनैतिक तथा क्रूर व्यवहार को देख कर व्याक्त किंकर्तव्य-विमूढ हो जाता है। जैसे पानी जिधर ढलान देखता है और मार्ग पाता है उधर ही चल पड़ता है उसी प्रकार व्यक्ति भी अपने को खो देता है तथा जिधर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिस्थितियों की सामूहिक शक्ति (Resultant Force) उसे ले जाती हैं उधर कान दवा कर चल पड़ता है। उस मनुष्य जन्म से वह कोई लाभ नहीं उठा पाता है। मैंने भी आज तक यही किया है।

जहां में आंख जो खोली फना, को भूल गये।
कुछ इब्तिदा ही में हम इन्तिहा को भूल गये।।

परन्तु जीवन के इस मोड़ पर आकर सोचता हूँ कि यह प्रवाह में बहना अनिवार्य नहीं था। जो प्रवाह में नहीं वहते वे ही व्यक्ति महान् होते हैं। इस वीर प्रसवा भूमि में महान् व्यक्ति भी प्रत्येक समय में प्रत्येक क्षेत्र में होते ही रहते है। संसार के प्रत्येक क्षेत्र में भी जहां इतनी अनैतिकता और भ्रष्टाचार है कि नैतिकता और सदाचार के दर्शन ही दुर्लभ हैं, वहाँ भी कुछ व्यक्ति कुछ साहित्य-उच्च तथा निर्दोप ध्येय को लिये हुये मिलते है। माया पद पद पर मिलती है परन्तु निष्कपट हितकर्ता व्यवहार भी कहीं न कहीं प्राप्त होता है। जहाँ मैं इतना अभागा और दुर्वल-चित्त रहा कि प्रवाह में वहे विना न रह सका, वहाँ दूसरी ओर इतना भाग्यशाली भी रहा कि मुझे सच्चे वीतराग हितोपदेशी देव-शास्त्र-गुरू से भी परिचय प्राप्त हुआ। जिनके दर्शन कर मैंने अपने को धन्य माना और मुझ में भविष्य के शाश्वत जीवन के उज्जवल होने की आशा का संचार हुआ।

जो अनुभव मुझे प्राप्त हुआ है वह अतीत में तथा वर्तमान में बहुतों को प्राप्त हुआ है परन्तु सबको तो नहीं। इस अनुभव तक पहुँचते पहुँचते वहुत से दृश्य मार्ग में मिले। सवसे पहले इस वैज्ञानिक युग की तथा धर्म-निरपेक्ष जनतन्त्र की भाषा साहित्य की पाठ्य पुस्तकों में हमको वहुमत की मान्यताओं का यह नमूना पढ़ाया जाता है कि यह सृष्टि किसी ईश्वर ने वनाई है। वह सर्व शक्तिमान है। उसने अवतार लिये हैं और पापियों का संहार किया है। इतिहास की पुस्तकें दूसरे प्रकार की रागिणी सिखाती हैं कि मनुष्य के पूर्वज पशु-पक्षी की तरह जंगलों में नंगे, असभ्य रहा करते थे, इत्यादि।

मत-मतांतरों द्वारा स्थापित त्यौहार मेले तमाशे जलूस तीर्थ-स्थान व्याख्यान आदि समय-समय पर अपने अपने दृश्य प्रस्तुत करने रहते हैं जिनका प्रामाणिक तथा पूर्ण विवरण उन उन मतों के अनुयायियों को भी ज्ञात नहीं होता है। क्योंकि संसार में प्रत्येक विवरण प्रारंभ से ही विवाद-ग्रस्त होता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और समय बीतने के साथ साथ तत्सम्बन्धी विवादों में वृद्धि ही होती जाती है। इन अन्धकार-पूर्ण विवादों से एक यह लाभ हुआ है कि 'सत्य की खोज' के लिए प्रत्येक अध्ययन के विषय में विभाग स्थापित हुये हैं जिनके द्वारा हजारों विद्वानों को उनके अपूर्ण निवन्धों (Thesis) के फलस्वरूप डाक्टरेट की डिग्रियां तथा विश्वविद्यालयों में सम्मान-पूर्ण प्राध्यापकों के पद प्राप्त होते है। पुस्तक-प्रकाशन का व्यवसाय पनप रहा है।

बाहर की ओर, दूसरों की ओर, देखने में यह उलझनें तथा परेशानियें बढ़ रही थीं कि सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का आदेश मिला कि अन्य जीव अपने को तो समझ तू कौन है। दूसरों की दृष्टि से अपने को देखना चाहेगा तो यहां भी उलझनें होंगी, इसलिए अपने को स्वयं देख। हाथ के कंगन को देखने के लिए आरसी की आवश्यकता थोड़े ही होती है। क्या स्पष्ट नहीं दीखता है कि तू चैतन्य द्रव्य है। संसार अनादि-निधन हैं। अपने संसार का निर्माता तू स्वयं है। पर-द्रव्य के बारे में चिन्ता करके तू अपनी आकुलतायें बढ़ा रहा है।

जीवन की डोर अभी उलझी हुई है परन्तु एक सिरा मिल गया है। उलझन का कारण भी दीख रहा है। संसार के अनन्त जीव अनेक प्रकार के (साहित्य कहता है कि यह प्रकार संख्या में चौरासी लाख हैं) पशु-पक्षी मनुष्य कीड़े, मकोड़े, पेड़-पौवे आदि का रूप धारण किये हुये हैं तथा प्रत्येक जीव चार चार प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित है—क्रोध की अग्नि, मान का हथौड़ा, माया की आरी और लोभ का फन्दा। असभ्य जीवों के शस्त्रास्त्र खुले रूप में हैं परन्तु सभ्य मनुष्य ने उन्हें म्यानों में रखा हुआ है। क्रोध को ज्ञान की म्यान में, मान को प्रतिष्ठा की म्यान में, माया को व्यावहारिकता की म्यान में तथा लोभ को आवश्यकता की म्यान में।

धर्म, प्रेम और उपकार की सद्भावनाएँ जीवों को शान्ति के साथ, मिलकर, आनन्दपूर्वक, जीवन विताने की प्रेरणा देती हैं परन्तु यह शस्त्रास्त्र निकट आते ही टकराते हैं जिसके शस्त्रास्त्र शक्तिशाली होते हैं वह उन दूसरे व्यक्तियों को दबा लेता है जिनके शस्त्रास्त्र कम शक्तिशाली हैं। इसलिए सफलता का इच्छुक प्रत्येक व्यक्ति अपने अपने शस्त्रास्त्रों को अधिक पैना तथा शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न करता है। इसी का नाम कला है, इसी का नाम सभ्यता है, इसी का नाम सफलता है, इसी का नाम विद्या है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यह शस्त्रास्त्र दूसरों को ही हानि पहुंचाते हों इतनी ही बात तो नहीं है। अपने स्वभाव के अनुसार यह तो जहां भी होते हैं वहीं प्रलय मचाते रहते हैं। संसार में सब जीवों ने इनको अपनाया हुआ है इसीलिये संसार में तो त्राहि-त्राहि मची हुई है। चूंकि सब एक ही नाव में बैठे हैं इसलिए इनकी मात्रा का 'उचित' तथा 'अनुचित' रूप में वर्णन किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति तथा राष्ट्र अपने शस्त्रास्त्रों की मात्रा तथा व्यवहार को 'उचित' तथा दूसरों के शस्त्रास्त्रों की मात्रा तथा व्यवहार को 'अनुचित' ठहराता है। इससे हंगामा और अधिक बढ़ रहा है।

देव-शास्त्रगुरू का सदुपदेश है कि जो जीव शाश्वत सुख-शाँति चाहता है वह अपने इन क्रोधादि शस्त्रास्त्रों को फेंक दे। वह दूसरे जीवों पर फिर प्रहार नहीं करेगा और दूसरे जीवों के प्रहार (वे तो होते ही रहेंगे) उस पर असर नहीं कर सकेंगे। जब तक दूसरे जीवों के प्रहार उस पर असर करते हैं तब तक समझना ही पड़ेगा कि अभी उसके भी शस्त्रास्त्र दूर नहीं हुए हैं यद्यपि उनका प्रयोग स्थगित कर देने से ऐसा लगता है कि जैसे वे शस्त्रास्त्र फेंक दिये गये हों। यही एक महत्वपूर्ण निर्णय है जिसे इस दुर्लभ मनुष्य-जन्म में लेना है। एक-एक जीव को भी, जिसको इस दृष्टि को जानने का तथा इस दृष्टि से सोचने विचारने एवं चर्चा करने का सुअवसर भी प्राप्त हुआ है, इस दृष्टि को अपनाना इस कारण से कठिन प्रतीत होता है कि जिन असंख्य जीवों के बीच वह रह रहा है, उनमें जब प्रायः सब ही इस दृष्टि को जानते तक नहीं हैं, तो वह अकेला इस दृष्टि को अपना कर किस प्रकार सफल होने की आशा कर सकता है। इस संशय को त्यागने में ही कल्याण निहित है। जिनका भविष्य कल्याणमय है, वे ही विवेकी जीव इस दृष्टि को अपनाने का साहस करेंगे। बिना साहस के कोई लाभ कभी होता ही नहीं है।

यह भी स्मरण रखने की बात है कि कषायों (इन क्रोधादि शस्त्रास्त्रों की सम्मिलित संज्ञा 'कषाय' है) के क्षेत्र में वह सफल समझा जायगा जो निर्द्वन्द होकर इनमें अधिकाधिक प्रवृत्ति करेगा बेशक उसके पास आन्तरिक सुख-शान्ति नाम-मात्र भी न होगी। आन्तरिक सुख-शान्ति के क्षेत्र में वह सफल होगा जो निःसंशय होकर कषायों से विमुख हो जायगा। पद-पद पर उसकी जीवन भर परीक्षा होती रहेगी। परीक्षा देते-देते वह प्रसन्न रहेगा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

और जीवन के अन्त में उसकी सफलता का परिणाम स्वर्णाक्षरों में घोषित होगा ही। किन्तु जो व्यक्ति इधर कषायों में प्रवृत्ति को कुछ ढीली तो कर देगा परन्तु इस योजना में अपनी श्रद्धा डावाँडोल ही रखेगा उसको किसी ओर की भी सफलता प्राप्त न होगी क्योंकि "संशयात्मा विनश्यति"। इसका वही हाल होगा जो दो घोड़ों पर एक साथ सवार होने के प्रयत्न करने का होता है अथवा दो नावों में एक ही समय में बैठने का प्रयत्न करने वाले का होता है।

✿ ✿ ✿

वीरों की समाज

(नाटक)

गजराजसिंह—कहो भाई जिनेन्द्र कुमार। कल तो यार तुम्हारे लाल मन्दिर से भी फौजी गीतों की आवाज आ रही थी ?

जिनेन्द्रकुमार—हां भाई गजराज सिंह। कल हमने रक्षामन्त्री श्री चौहान को ५१,००० की थैली भेंट की थी।

गज०—तो तुम जैन लोग भी अब हिंसा के काम करने में मदद देने लगे ?

जिने०—जैन लोग चूंकी अहिंसा के व्यवहार पर जोर देते हैं इसलिये इनके बारे में बहुत गलतफहमी फैली हुई है।

जैन लोग केवल संकल्पी-हिंसा का त्याग करते हैं मांस नहीं खाते और बेकार की लड़ाई मोल नही लेते,। गृहस्थ लोग आरम्भी, उद्योगी और विरोधी हिंसा का त्याग नहीं कर सकते। यह चारों तरह की केवल साधू ही छोड़ सकते हैं।

गज०—यार, कैसी बातें कर रहे हो ? हमने तो किसी जैनी को लड़ाई झगड़े में हिस्सा लेते हुए न देखा न सुना। हमतो समझते हैं यह कौम डरपोक है। इतिहास तक में किसी जैन राजा या सेनापति का नाम नहीं है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिने०—है कैसे नहीं ? सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य, जिसने सिकन्दर के सिपहसालार सेल्यूकस को हराकर भारत की लाज रखी थी, कौन था ?, वह वीर भामाशाह जिसने राणा प्रताप की रुपये से और तलवार से मदद की थी कौन था ?

उस दिन लाल मन्दिर में ही एक वीर गति पाये हुये जैन फ्लाइंग आफीसर की फौजी वर्दी रक्षामंत्री चौहान साहब को भेंट की गई थी। अभी नेफा की चीन के साथ लड़ाई में कैप्टेन महावीर प्रजाद जैन को वीरता का पुरस्कार "महावीर-चक्र" राष्ट्रपति ने प्रदान किया है।

गज०—अच्छा। मैं तो वाकई भूल में था !

जिने०—भाई ! अहिंसा तो सब पड़ौसियों के साथ प्रतिदिन का व्यवहार होना ही चाहिये नहीं तो एक को दूसरे का विश्वास ही नहीं रहेगा। लेकिन जो मित्र होकर विश्वासघात कर जाय वह तो पापी है और दण्डनीय है।

गज०—यार, इन मोटे पेट वाले मुनाफाखोर, सूदखोर कियाखोर, लोगों को देखकर जैन धर्म के बारे में अगर हम लोगों को गलतफहमी रही हो तो क्या ताज्जुब ?

जिने०---यहां कुछ हद तक तुम ठीक कहते हो। लेकिन जैन धर्म के चौबीसों तीर्थंकर क्षत्रिय थे। वे 'जिन' यानि विजय करने वाले बने। इनके मानने वाले हम जैन हैं। हमारे जीवन का लक्ष्य ही विजय प्राप्त करना है, बेईमानी से देशवासियों का खून चूस कर रुपया इकट्ठा करना तो सुपने में भी धर्म नहीं माना जा सकता। जो लोग ऐसा करते हैं वे देशद्रोही हैं।

गज०---अच्छा भाई धन्यवाद। फिर मिलेंगे। तुम तो यार छुपे रुस्तम ही निकले।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विवाह प्रथा

आज के युग में

सरल प्रकृति के नवयुवक और कुमारियां विवाह संपन्न होने की प्रचलित नीति के विस्तार और व्यय को देखकर आश्चर्यचकित रह जाते हैं। पंचों के सामने की जाने वाली विवाह-बन्धन की प्रतिज्ञा के अतिरिक्त उन्हें दूसरी भी रस्म का सिर-पैर समझ में नहीं आता। बड़ों से पूछने पर मालूम होता है कि विभिन्न रस्मों का मतलब वे भी नहीं बतला सकते और आज के समय में उन रस्मों की आवश्यकता को वे भी नहीं सिद्ध कर सकते हैं।

जैसे प्रत्येक राष्ट्र के बजट पर सुरक्षा-व्यय ही छाया रहता है जिसके कारण विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि उन्नति के विभागों को पर्याप्त धन-राशि नहीं मिल पाती है, उसी प्रकार मध्यम वर्ग के प्रत्येक कन्या वाले परिवार के लिए कन्या का विवाह एक विकट समस्या बना रहता है जिसके कारण परिवार में बच्चों की शिक्षा तथा स्वास्थ्य और जीवन के स्तर अत्यन्त निम्न बने रहते हैं। जिस परिवार में कन्याओं की संख्या एक-दो से अधिक होती है वहां का जीवन तो और भी अधिक दुःख और चिन्ता से परिपूर्ण रहता है।

बुद्धि की कमी की कल्पना न तो संसार के कूटनीतिज्ञों में की जा सकती है, न समाज के नेताओं में। फिर क्या कारण है कि बुद्धिमान व्यक्ति ही एक दूसरे के नाश में चिन्ता में, और तनाव में कारण बन रहे है ? समाज तन्त्र के युग में किसी व्यक्ति विशेष पर समाज की दुर्दशा के उत्तरदायित्व का आरोप नहीं किया जा सकता। इसलिए सब नेता एक दूसरे पर अनैतिकता का आरोप करते रहकर अपना नेतृत्व का काम चालू रखते हैं। समय समय पर वे समाज सुधार के लिए बड़े-छोटे अधिवेशन करते रहते हैं और भाषण देते हैं। छोटे मोटे प्रस्ताव भी पास हो जाते हैं। परन्तु उन पर भी कभी अमल नहीं होता क्योंकि यह सब काम तो एक तमाशे के लिए होता है।

प्रतीत हुआ है कि बुद्धि ही सब कुछ नहीं है। सब कुछ हो सकती तो संसार की और समाज की यह विषम स्थिति कैसे होती। विषम स्थिति का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कारण है कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ) जिस पर बुद्धि काबू नहीं पारही हैं परन्तु अपनी प्रतिष्ठा रखने के लिए बुद्धि से कषाय को ही सही प्रमाणित करना पड़ रहा है और ऐसा करने के लिए उसे कपट का आश्रय लेना पड़ रहा है। बुद्धि ने अपने इस प्रयास को कूटनीति की संज्ञा दी है। कषाय नाश करती है, कर रही है और करती ही जायगी। इससे छुटकारा पाने का तरीका है परन्तु बहुत कठिन है। गृहस्थ अवस्था में कषाय मंद की जा सकती है। परन्तु मन्द भी केवल वह व्यक्ति कर सकता है जिसका लक्ष्य कालान्तर में कषाय को समूल नष्ट करना है।

व्यापक रूप से विवाह सम्बन्धी घातक व्यय उस समाज में समाप्त किये जा सकते हैं जिसमें सद्बुद्धि, कषाय से प्रबल हो। जैन समाज के लिए यह कार्य सुगम होना चाहिए था, क्योंकि जैनधर्म में कषायों के समूल नाश का ही उपदेश है। किन्तु देखते हैं कि जैन समाज में ही यह हाय-हाय सबसे अधिक हैं। मनुष्य बेचारा क्या करे ? पीढ़ियों की कषाय ने जो रास्ता बना रखा है, अपनी कषाय के कारण उसे उसी रास्ते पर चलना पड़ रहा है। खिलाफ जायगा तो पददलित नागिन की तरह अपमानित समाज उसे बेवकूफ कहेगी। अभिमानी भी कह सकती है।

समाज की तरफ से ही विवाह के तरीके का रूप बदल जाय यह बात तो नामुमकिन साबित होती है। वह तो ऐसे ऐसे संशोधन पास कर सकती हैं कि 'दहेज का दिखावा बन्द हो', 'बारात एक ही रात रहे', इत्यादि। जिससे यह भी जाहिर न हो कि समाज के नेता समाज की समस्याओं से अनभिज्ञ हैं, उनका शगल और शौक भी चलता रहे और उनकी प्रतिष्ठा भी बनी रहे।

हमारी तो अविवाहित युवक युवतियों को, जिनकी बुद्धि निर्मल है और जिन्हें कषाय जनित ऊटपटांग बातें रुचिकर नहीं हैं, यही सलाह है कि वे विवाह के इरादे को ही छोड़ दें। वे यह समझने की भी कोशिश करें कि विवाह क्या है और किसलिए किया जाना चाहिये। इतना मूल्य देकर वे कोई बीमारी ही तो नहीं पल्ले बांध रहे हैं ? जैसे बहुत मूल्य देकर सिल्क का पार-दर्शक कपड़ा खरीदा जाय जिससे केवल शोभा ही शोभा हो, लाभ कुछ न हो वही हाल है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इतने बंधन और कर्तव्य लेकर तो यह जीव पैदा ही होता है—सूक्ष्म कार्माण शरीर का बन्धन, स्थूल शरीर का बन्धन, माता के, परिवार के प्रति कर्तव्य, समाज, राष्ट्र मानवता तथा जीवमात्र के प्रति कर्तव्य। इन कर्तव्यों को जीवन में पूरा कर सके और बन्धनों को आगे के लिये काट सके और इस तरह अपने मनुष्य जीवन को सफल कर सके तो जीवन सार्थक हो जाय। किन्तु एक अपना, नये परिवार का, बन्धन और पैदा कर लेना, जो न कोई कर्तव्य करने देगा, न बन्धन दूर करने देना, यह तो महामूर्खता है।

वेश्या के सम्बन्ध में कहा है कि यह वह कामदेव की अग्नि है जो रूप के ईंधन से विशेषरूप से प्रज्वलित है तथा जिसमें कामी पुरुष अपने यौवन धन की आहूति देते हैं। विवाह भी ऐसी अग्नि है। जिसके चमत्कार से आकर्षित होकर, दो स्वतन्त्र व्यक्ति स्वेच्छा से (विडम्बना देखो) जीवन भर के लिए एक दूसरे के परतन्त्र बन जाते हैं, अपने अन्य मौलिक कर्तव्यों से विमुख हो जाते हैं और अनादिकालिन बन्धनों को काटने की तो सुध ही भूल जाते हैं। धन्य हैं देवाधिदेव परम भट्टारक भगवान् श्री वर्धमान स्वामी जिन्होंने इस त्रिभुवन-जयी काम सुभट को बाल्यावस्था में ही अपने बल से जीत लिया। विवेक-शील व्यक्तियों को वे बालब्रह्मचारी भगवान् ब्रह्मचर्य का बल प्रदान करने की कृपा करें।

यदि विवाह करना ही पड़े तो प्रत्येक को अपने होने वाले साथी के विषय में अन्य बातों की अपेक्षा यह निश्चय करने की आवश्यकता है कि वह उसके मौलिक कर्तव्यों में यदि साधक भी न बने तो कम से कम बाधक तो नहीं बनेगा। उन क्षेत्रों में तो उसकी अपनी स्वतन्त्रता का अपहरण नहीं होगा।

जब कि हिन्दू धर्म में भी जीवन के अन्तिम चतुर्थ भाग में सन्यास लेने का विधान है तो निवृत्ति प्रधान जैनधर्म के अनुयायी तो इस विषय पर सोचें कि पाणिग्रहण के समय जीवन पर्यन्त गृहस्थावस्था में ही रहने की प्रतिज्ञा करना कहाँ तक उचित है। मरणोपरान्त जीवन-बीमे की रकम वाले बीमों का प्रीमियम भी तीस वर्ष तक ही दिया जाता है और सरकारी नौकरी भी अट्ठावन साल की उम्र तक ही की जाती है तो यह गृहस्थी की नौकरी क्या जीवन के अन्तिम क्षण तक करनी पड़ेगी ?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसलिए ली जाने वाली प्रतिज्ञाओं में प्रतिज्ञा लेने वाले नवदम्पति अपनी अपनी मानसिक परिस्थितियों के अनुसार उचित परिवर्तन करलें। बेहतर तो यही प्रतीत होता है कि विवाह और उसकी विशिष्ट प्रतिज्ञाओं को कानूनी आधार देने के लिये प्रतिज्ञापत्र राजकीय अदालतों में रजिस्टरी किये जाँय।

विवाहोपरान्त वीर पुरुष भी कायर बन जाता है क्योंकि स्त्री एक आर्थिक भार के रूप में उसके ऊपर लदती है और तत्पश्चात् निरीह छोटे-छोटे बच्चों के भी निराश्रित हो जाने का भय पुरुष को किसी भी साहस का काम तथा अपने पौरुष का कर्तव्य भी करने से रोकता रहता है। हमारी पूरी समाज इस कारण कायर है परन्तु अपनी कायरता को छिपाने के लिए उसे कूट-नीतिज्ञता का सहारा लेना पड़ा है। देखा जा रहा है कि जहाँ पर स्त्री को व्यवसाय के लिए सुशिक्षित देख कर ही विवाह किया जाता है वहाँ भी स्त्री अपनी आर्थिक स्वतन्त्रता का स्वागत न करके अपने आपको परतन्त्र और पराश्रित और पुरुष को कायर तथा चिन्ताग्रस्त ही रखना पसन्द करती है। चार पाँच वर्ष के अनभ्यास के बाद उसकी डिग्रियां व्यर्थ हो ही जाती हैं। क्योंकि "अनभ्यासे विषं विद्या।"

स्त्री पुरुष दोनों को पर्याय की अनित्यता तथा द्रव्य की ध्रुवता को ध्यान में रख कर, अपनी अपनी पृथक् एकत्वता का निश्चय करके तथा विवाह को कुछ काल के लिए नदी-नाव संयोग जानकर अपने जीवन का प्रोग्राम बनाना चाहिए। ऐसा करेंगे तो जीवन की कोई दुर्घटना उन्हें वज्रपात नहीं लगेगी। कर्म-व्यवस्था को मानकर चलेंगे तो जीवन में किसी भी ऊँचे नीचे परिवर्तन के आ जाने पर उन्हें हर्ष-विषाद नही होगा। स्त्री यदि धर्मपत्नी बनेगी अर्थात् पुरुष के द्वारा होने वाली धर्म की साधना में सहायक बनेगी तो कल्याण होगा अन्यथा नहीं। विवाह की वर्तमान कलुषित रीति को चिरजींवी रखने में हमारी अज्ञानी स्त्रियें ही प्रधान कारण हैं। तत्वों के स्वरूप का ज्ञान ही पहले तत्वज्ञानियों के परिवारों में होने वाले लड़कों के विवाह के रूप को बदलेगा। फिर ज्यों-ज्यों तत्वज्ञानियों की संख्या बढ़ती जायगी विवाह का सामाजिक रूप भी बदल सकने की सम्भावना होगी।

प्रायः स्त्री अपने भाग्य को परिवार की सुख-समृद्धि का कारण मानती है और परिवार में हुई असफलताओं और दुर्घटनाओं को पति के पुरुषार्थ और

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बुद्धि की हीनता के कारण हुआ मानती है। उसके ऐसे भूल भरे विचार परिवार में कलह और असन्तोष को उत्पन्न करते हैं। मूढ़ व्यक्तियों के वस्तु स्वरूप से विपरीत विचारों को विवाह से पहले जांचने की समाज में आज कल कोई व्यवस्था नहीं है। हमने अपने पुत्र के लिये आने वाले एक सम्बन्ध के अभिभावक से कन्या के धर्म सम्बन्धी विचार उसीसे लिखजाकर भेजने की प्रार्थना की तो उत्तर तो कोई क्या प्राप्त होना था, बीच में पड़ने वाले हमारे एक सम्बन्धी इतने नाराज़ हो गये कि उन्होंने हम से पत्र-व्यवहार तक का भी नाता तोड़ लिया।

हमारे अभिनेता नेता जब जोश की मौज में आते है तो सरल प्रकृति वाले नौजवानों को दहेज न लेने के लिए उकसाते हैं। पालन-पोषण करने वाले माता-पिताओं की भावनाओं को इससे बड़ी ठेस पहुंचती है। उनके अधिकारों में यह क्रिया अनुचित है, हस्तक्षेप भी है। नौजवानों को अपने माता-पिता के विपरीत बलपूर्वक कभी नहीं जाना चाहिए। विवाह में दहेज ही क्या—जो भी रस्म युक्ति-युक्त न हो वह सब ही व्यर्थ व्यय है। परन्तु कन्या पक्ष अयुक्ति भी व्यय कर रहा हो लेकिन वर पक्ष की मांग के कारण नहीं कर रहा हो स्वेक्षा से कर रहा हो, तो वर पक्ष को उसे स्वीकार करने में कोई आपत्ति करनी उचित नहीं है। दहेज या कोई भी व्यय अपनी स्थिति की अनुकूलता तक, और युक्तियुक्तता की सीमा तक, अपनी भावनाओं के अनुसार बिना दूसरे पक्ष के दखल दिये किया जाने पर बुरे नहीं हैं। आखिर हमारी समाज न भूखों की समाज है, न सौंदर्य-प्रमोद आदि भावनाओं से विहीन व्यक्तितों की समाज है। विवाह के शुभ अवसर पर प्रीतिभोज गृह-शोभा, नृत्य-गीत-वादित्र, आदि सब प्रकार के मांगलिक कार्य यथाशक्ति होने ही चाहियें।

अरिहन्त, सिद्ध, साधु और केवली प्रणीत धर्म ही मंगलकारक हैं। ये ही लोक में सर्वोत्तम हैं। इनकी ही शरण जाने से व्यक्तियों का, परिवारों का और समाज का कल्याण हो सकता है। आज जो दुर्दशा है वह इनके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर न चलने के कारण ही है।

★ ★ ★

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

* वीरप्रभु बन्दना *

वीर हरो भवपीर

वीर हरो भवपीर, हमारी वीर हरो भवपीर।
मैं दुख तपित दयामृत-सर तुम लखि आयो तुम तीर॥
तुम परमेश मोखमग दर्शक, मोह दवानल-नीर।
तुम बिन हेतु जगत-उपकारी, शुद्ध चिदानन्द धीर॥
गणपति ज्ञान-समुद्र न लंघै, तुम गुणसिंधु गहीर।
याद नहीं मैं विपद सही जो, धरि धरि अमित शरीर॥
तुम गुण चिन्तन नशत दुःख भय, ज्यों धन चलत समीर।
कोटि बार की अरज़ यही है, मैं दुख सहूँ अधीर॥
हरो वेदना-फंद 'दौल' को, कटत करम जंजीर॥

* सब मिल के आज जय कहो *

सब मिल के आज जय कहो श्री वीर प्रभु की।
मस्तक झुका के जय कहो श्री वीर प्रभु की॥
विघ्नों का नाश होता है लेने से नाम के।
माला सदा जपते रहो श्री वीर प्रभु की॥
ज्ञानी बनो, दानी बनो, बलवान भी बनो।
अकलंक सम बन कर करो, जय वीर प्रभु की॥
होकर स्वतन्त्र, धर्म की रक्षा सदा करो।
निर्भय बनो और जय कहो श्री वीर प्रभु की॥
तुझ को भी अगर मोक्ष की इच्छा हुई अय दास।
उस वाणी पै श्रद्धा करो श्री वीर प्रभु की॥

* गुरु बन्दना *

चरणनि से म्हारी लागी लगन॥
हाथ कमंडलु कर में पीछी मिले गुरु मोही तारण तरण।
हित मित बचन धरम उपदेशैं, मानो वर्षत मेघ झरन॥
बन में बसैं कसैं इन्द्रिन को, धारैं करुणारूप नगन।
नैनानन्द नमत है तिनको, जो नित आतम ध्यान मगन॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्यमेव जयते

The President of India

To Raj Rajeshwar Greeting:

I, reposing special Trust and Confidence in your Fidelity, Courage and good Conduct, do by these Presents Constitute and Appoint you to be Pilot Officer in the Indian Air Force from the sixteenth day of April Nineteen hundred and fiftyfive

I, therefore, charge and command you carefully and diligently to discharge your Duty in that Rank or in any higher Rank to which you may from time to time hereafter be promoted or appointed, of which a notification will be made in the Gazette of India, and to obey such directions as from time to time you shall receive from me or any of your superior Officers and to observe and execute the Rules, Regulations and Orders for the Governance of the Indian Air Force.

And I do hereby charge and command the Officers and Men subordinate to you to conduct themselves with all due Respect and Obedience to you as their Superior Officer.

Given at New Delhi this sixth day of July Nineteen hundred and sixty

Rajendra Prasad

President of India

Secretary to the Govt. of India.

Registered No. A.F. 1310 Ministry of Defence

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्यमेव जयते

भारत का राष्ट्रपति

.................राज राजेश्वर.................को स्वस्तिवचन,

मैं, आपकी वफादारी, साहस और सदाचार में विशेष आस्था और विश्वास करके इन उपहारों द्वारा आपको "भारतीय नभ सेना" में "पाइलॉट ऑफ़िसर" कोटि में सन १९५५ के अप्रैल मास के सोलहवें दिवस से प्रतिष्ठित और नियुक्त करता हूं।

अतएव मैं आपको यह प्रभार और आदेश देता हूं कि आप अपनी इस कोटि में के या इससे उच्चतर किसी कोटि में के जिस पर समय समय पर एतत् पश्चात् आप पदोन्नत वा नियुक्त हों जिसकी सूचना भारत के गज़ट में दी जायगी अपने कर्तव्यों का सावधानी और श्रमशीलता से पालन करें और मुझसे या अपने किसी उच्चतर पदधारी से मिलनेवाले निर्देशों को मानें तथा "भारतीय नभ सेना" के शासन सम्बन्धी नियमों, विनियमों और आदेशों का पालन और निष्पादन करते रहें।

तथा मैं आपके मातहत पदधारियों और आदमियों को यह प्रभार और आदेश एतत् द्वारा देता हूं कि वे आपका अपने उच्चतर पदधारी के रूप में आदर और आज्ञानुवर्तन करें।

सन १९६०.....के जुलाई.....मास के आज.....छठे.....दिवस को नई दिल्ली.....में प्रदत्त।

राजेन्द्र प्रसाद

भारत का राष्ट्रपति

ओ पुल्ला रेड्डी

प्रतिरक्षा मंत्रालय में भारत सरकार

का सचिव

पंजीयन संख्या ए.एफ. 1310

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

* सविनय कोटि प्रणाम *

— 'सुधेश' जैन नागौद —

पार्श्व प्रभु' के उन चरणों को सविनय कोटि प्रणाम।
जिनके वन्दन से ही निर्मल हो जाते परिणाम॥

(१)

मोक्ष मार्ग पर हुये अग्रसर जो तज राजनिकेत।
जिन्हें वक्ष पर धार हुई थी पावन वन की रेत॥
जो अविराम बढ़े बनने को मुक्ति रमा के कन्त।
प्रगतिशीलता लख यह जिनकी विस्मित हुये दिगंत॥

गतिमय रह भी जो न जानते थे थकने का नाम।
'पार्श्व प्रभु' के उन चरणों को सविनय कोटि प्रणाम॥

(२)

जिनने लक्ष्य बनाया करना पूर्ण सत्य की खोज।
अतः जिन्होंने किया प्रथम ही तो निंदलित मनोज॥
पुनः विहार स्वयं कर पावन किये नगर औ गाँव।
लगा कि भव-जल से उबारने घूम रही दो नाव॥

जिन्हें अंक में पा कृतार्थ ही हो जाते थे ग्राम।
'पार्श्व प्रभु' के उन चरणों को सविनय कोटि प्रणाम॥

(३)

जिनकी गति के आगे हारे आँधी औ' भूचाल।
जिनकी गति कर सके न कुण्ठित बाधाओं के जाल॥
जो उपसर्ग परीषह से भी हुये न खिन्न हताश।
छिन्न-भिन्न कर दिया जिन्होंने कर्मों का दृढ़ पाश॥

और लगाया जन्म मरण पर जिनने पूर्ण विराम।
'पार्श्व, प्रभु', के उन चरणों को सविनय कोटि प्रणाम॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

* भक्ति भावना *

पारस जिन चरण निरखि हरष यों लहायो।
चितवत चन्दा चकोर ज्यों प्रमोद थायो॥
ज्यों सुन घनघोर शोर, मोर हर्ष को न ओर।
रंक निधि - समाज - राज, पाय मुदित थायो॥
ज्यों जन चिर-छुधित होय, भोजन लखि सुखित होय।
भेषज गद हरण पाय, सरुज सुहरषायो॥
वासर भयो धन्य आज, दुरित दूर पड़े भाज।
शान्त दशा देखि, महा - मोह - तम पलायो॥
जाके गुण जानन जिम, मानत भव कानन इम।
ज्ञानि 'दौल' शरण आय, शिव सुख ललचायो॥

* * *

वे गुण चरण जहाँ धरैं, जग में तीरथ जेह।
सो रज मम मस्तक चढ़ो, 'भूधर' मांगे येह॥

* * *

मैं तुम चरण कमल गुण गाए, बहु विधि भक्ति करी मनलाय।
जनम-जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवा फल दीजे मोय॥

* * *

नाथ तोरे चरणणि की मोरे माथे से लग रही धूर॥
जब मोरे माथे से धूर लगी है, मोरे अष्ट करम दुःख दूर॥
अन्य देव बहुतेरे मैं सेये, मेरा इतना भया है कसूर॥

* * *

स्वामी स्वामी पारसनाथ तिहारो दर्शन मैं पायो॥
चहुंगति रूल्यो सह्यो दुःख भारी, पुन्य जोग यह छवि निहारी,
महिमा थारी अपरम्पारी, सुनी शरणैं आयो॥
बिघन विनाशन मंगलकारी, वेगहिं लीज्यो खबर हमारी॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुमरे चरणणि की बलिहारी, सेवक शरण आयो ॥ स्वामी०
कर्मनि ने मोहि बहुत सतायो, सुख मैंने कबहुँ नहीं पायो ॥
अब मैं शरण तिहारी आयो, मन में हरषायो ॥ स्वामी०
अपना दास जानि मोहिं लीजे, इतनी करुणा मुझ पर कीजे,
भव भव में मोहि दर्शन दीजे, सेवक शिर नायो ॥ स्वामी०

* * *

तन मन सारे जी साँवरया, तुम पर वारणा जी ॥
बालापन में कमठ निवारो, अग्नी जलता नाग उबारो,
वैरी कर्मनि मारे, तप करि धारणा जी ॥
जीवाजीव दरब बतलाये, सब जीवनि के भरम मिटाये ।
शिव मारग दरशाये, दुःख परिहारना जी ॥
स्याद्वाद सतभंग सुनायो, नय परमाण निश्चय करवाये ।
मिथ्या मत किये खंडन, सत को धारणा जी ॥
न्यामत प्रभु पारस गुण गावै, पुनि पुनि चरणणि शीस नमावै ।
वीतराग सर्वज्ञ तुम्ही, हितकारना जी ॥

* * *

साँवलिया पारसनाथ शिखर पर भले विराजैं जी ॥
टौंक टौंक पर ध्वजा विराजै, झालर घण्टा बाजैं जी ॥
ऊँचा नीचा परवत सोहै, जहँ भीलों का वासा जी ॥
देश देश के यात्री आवैं, आनन्द मंगल खासा जी ॥

* * *

तुम से लागी लगन, लेलो अपनी शरण ।
पारस प्यारा, मेटो मेटो जी संकट हमारा ॥
निशिदिन तुमको जपूँ, पर से नेहा तजूँ ।
जीवन सारा, तेरे चरणों में बीते हमारा ॥ टेक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अश्वसेन के राजदुलारे, बामा देवी के सुत प्राण प्यारे।
सब से नेहा तोड़ा, जग से मुंह मोड़ा, संयम धारा॥
इन्द्र और धरणेन्द्र भी आये, देवी पद्मावती मंगल गाये।
आशा पूरो सदा, दुःख नहीं पावे कदा, सेवक थारा॥
जगके दुःखकी परवाह नहीं है, स्वर्ग-सुखकी भी चाह नहीं है,
मेटो जामन मरण होवे ऐसा यंतन, पारस प्यारा॥
लाखों बार तुम्हें शीश नवाऊँ, जग के नाथ तुम्हें कैसे पाऊँ।

❀ ❀ ❀

'पंकज' व्याकुल भया, दर्शन बिन ये जिया, लागे खारा॥
देव! तुम्हारे कई उपासक कई ढंग से आते हैं।
सेवा में बहुमूल्य भेंट वह कई रंग के लाते हैं॥
धूम धाम अरु साज बाज से मंदिर में वह आते हैं।
मुक्तामणि वहुमूल्य वस्तु लाकर तुम्हें चढ़ाते हैं॥
मैं ही हूँ गरीब एक ऐसा जो कुछ साथ नहीं लाया।
फिर भी साहस कर मंदिर में पूजा करने को आया॥
धूप, दीप, नैवेद्य नहीं है झांकी का शृंगार नहीं।
नाथ चढ़ाने को चरणों में फूलों का भी हार नहीं॥
किस विधि स्तुति करूं तुम्हारी, है स्वर में माधुर्य नहीं।
मन का भाव प्रकट करने को वाणी में चातुर्य नहीं।
नहीं दान और भेंट है खाली हाथ चला आया॥
पूजा की विधि नहीं जानता फिर भी नाथ! चला आया।
पूजा और पुजापा प्रभुवर! इसी पुजारी को समझो॥
दान दक्षिणा और निछावर इसी भिखारी को समझो।
मैं! उन्मत्त भक्ति का लोभी हृदय दिखाने आया हूँ॥
जो कुछ है बस यही पास है इसे चढ़ाने आया हूँ॥
चरणों में अर्पित है यह हे नाथ इसे पावन कर दो।
यह हृदय आपके योग्य बने हे नाथ इसे ऐसा कर दो॥

●

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ग्रीनपार्क के निकटवर्ती दर्शनीय तथा ऐतिहासिक स्थान

✻ मुनीन्द्र कुमार जैन ✻

सफदरजंग का मकबरा : यह मदरसा के नाम से प्रसिद्ध है। यह मकबरा एक विशाल परकोट के अन्दर स्थित है। मकबरे का विशाल भवन कई मंजिल ऊंचा है और चारों ओर नहरें बनी हैं। भवन के मुख्य द्वार के ऊपर संग्रहालय भी दर्शनीय है।

हवाई अड्डा : यह मकबरे के साथ ही बना है और दिल्ली के असैनिक उड्डयन का प्रमुख केन्द्र है। दिल्ली फ्लाइंग क्लब भी यहीं स्थित है।

आल इन्डिया मेडिकल इन्स्टीच्यूट : यह दिल्ली में बनने वाली सर्व प्रमुख चिकित्सक संस्था है और फैक्टरी रोड के पास रिंग रोड पर स्थित है। यहां असाध्य रोगों की चिकित्सा सम्बन्धी खोज की जाती है।

मोठ की मस्जिद : यह कुतुब जाने वाले मार्ग पर स्थित एक सुन्दर मस्जिद है। कहा जाता है कि एक बार नमाज पढ़ते समय सिकन्दर लोदी को एक मोठ का दाना पड़ा मिला। उसने वह अपने मंत्री को दे दिया मंत्री ने उसको बोकर मोठ उगायी और उसके बीज को बोकर कई साल बाद काफी रुपया इकट्ठा करके इस मस्जिद का निर्माण कराया।

हौज खास : इस विशाल तालाब का निर्माण अलाउद्दीन ने ७० एकड़ भूमि पर कराया था। इस विशाल जलाशय को बनाने का उद्देश्य पास की बस्ती के लिए जल उपलब्ध करना था। फिरोजशाह तुगलक ने इस ताल की मरम्मत करायी और यहां एक मदरसा भी बनाया। तालाब के किनारे बने स्नान घर के खंडहर काफी भव्य हैं।

फिरोजशाह का मकबरा : यह हौज खास के दक्षिणी दिशा में स्थित है। यह भवन कला का एक सुन्दर नमूना है और अभी तक अच्छी दशा में है।

कुतुब मीनार : यह २३८ फुट ऊंची पांच मंजिला मीनार है। कहा जाता है, कि इसका निर्माण पृथ्वीराज चौहान के काल में हुआ और इसे 'यमुना स्तम्भ' कहते थे। वर्तमान काल में मुगल शासकों ने इसमें इतने परिवर्तन किये कि अब इसमें हिन्दू स्थापत्य के चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं होते।

अलाई मीनार : कुतुब से उत्तर में ५०० फुट दूर इस अधबनी मीनार का खंडहर है। कहा जाता है कि अलाउद्दीन खिलजी इस मीनार को कुतुब मीनार से भी भव्य बनाना चाहता था। इसी मीनार को देखकर यह प्रतीत होता है कि वास्तव में कुतुब मीनार का निर्माण हिन्दू काल में हुआ था, क्योंकि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यदि कुतुबद्दीन एवक मीनार बनवा सकता था तो उससे अधिक समर्थ अलाउद्दीन वैसी मीनार क्यों न बनवा सका ?

पार्श्वनाथ मंदिर : यह वह स्थान है जिसको आजकल कुव्वत-उल-इस्लाम मस्जिद कहते हैं। मंदिर की दीवारों की पच्चीकारी और जैन मूर्तियों चिन्ह अब भी शेष हैं। इस मन्दिर का निर्माण तोमरवंशी राजा अनंगपाल तृतीय के मंत्री अग्रवाल वंशी साहू नट्टल ने सन् ११३२ से पूर्व करवाया था।

लोह स्तम्भ : यह प्राचीन भारत की कला का प्रतीक ठोस लोहे का १६ इंच आयत का २४ फुट ऊंचा स्तम्भ है। इस पर अंकित लेख से पता चलता है कि इसका निर्माण चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने चौथी शताब्दी में कराया। यह लोहा रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा इतना शुद्ध किया गया है कि उस पर ओषजनीकरण का कुछ प्रभाव नहीं होता।

अल्तमश का मकबरा : यह सन् १२११-१२३६ में बना और पार्श्वनाथ मन्दिर के पीछे स्थित है। इस मकबरे की दीवारों पर कुरान अंकित है। यह भारत का सबसे प्राचीन मकबरा है।

अलाई दरवाजा : यह कुतुबमीनार से ४० फुट की दूरी पर स्थित लाल पत्थर का सुरुचिपूर्ण द्वार है इसका निर्माण १३१० में अलाउद्दीन ने कराया। यह पठान वंश द्वारा भारत में निर्मित अन्तिम इमारत है।

भूल भुलैया : यह स्थान कुतुब के पास महरौली गांव में है। यह वास्तव में अकबर के सौतेले भाई आदम खां का मकबरा है। किन्तु अपने टेढ़े-मेढ़े मार्ग के कारण भूल भुलैया कहलाता है।

सूरज कुण्ड : यह स्थान कुतुब-बदरपुर मार्ग पर स्थित हैं और दिल्ली के हिन्दू साम्राज्य का प्रतीक है। यह कुंड एक ऊंचे टीले पर स्थित है। किसी समय इसके किनारे सूर्य देवता का एक विशाल मन्दिर स्थित था। कहा जाता है कि तोमर वंश से पहले वास्तविक दिल्ली यहीं स्थित थी।

दादा वाड़ी : यहां दादा गुरू श्री मणीधारी जी के चरण अंकित है। अभी हाल में यहां पर अनेक सुन्दर दृश्यों का अंकन किया गया है। जिनमें नन्दिदीप आदि की झांकी दर्शनीय है।

योगमाया : योगमाया का प्रसिद्ध मन्दिर कुतुब और दादावाड़ी के पास ही स्थित है। अपनी मानता के कारण दूर दूर से दर्शनार्थी इस मन्दिर में योगमाया के दर्शनों के लिए आते रहते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृपया इस ग्रन्थको निम्नांकित तिथि पर या उसके पूर्व
लौटा दें। विलम्बसे लौटानेपर ५ पैसे
प्रतिदिन दण्ड देना होगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

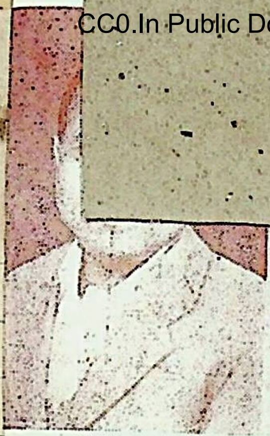

श्री गुरुचरणदास जैन

श्री जं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi